चन्दामामा
मार्च १९९७

चन्दामामा
चांदोबा
CHANDAMAMA

चन्दामामा

मार्च १९९७

एक प्रति : ६.००
वार्षिक चंदा : ७२.००

RUF AND TUF
A QUALITY PRODUCT FROM ARVIND MILLS
JUNIOR

हाय!
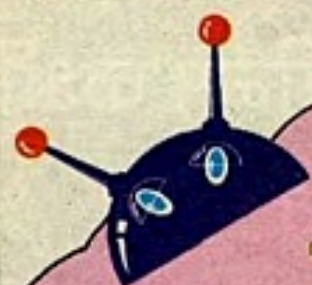
सुन्दर लड़कियों, शरारती लड़कों जल्दी जाओ अनोखे खिलौने ले आओ!

बोल बेबी बोल, रॉक एन् रोल!

लाजवाब थ्री-इन-वन्! हैपी बर्थ डे धुन. मिनी की-बोर्ड. 11 पियानो-की के साथ. रैप संगीत, 5 रैप आवाज़ के साथ.

रंगीला सुनोगे?

पेश है 'मेरा अपना बैंड' (My own band) असली बीट. डिस्को लाइट. चार रैप आवाजें – रैटिल ड्रम. साईड ड्रम, बॉस ड्रम और सिम्बल्स. सरल धुनें तैयार करता है.

कपिल और सचिन कुछ राज़ बता रहे हैं!

बोलता पॉकिट फोन. सुनो सचिन और कॅप्स क्रिकेट के बारे में क्या कह रहे हैं. असली टेलीफोन आवाज़, म्युज़िकल पुश-की काम.

मम्मी! मेरे पियानो में एक केक है!

सालगिरह केक पियानो. खुशी मनाते मनाते बर्थ डे गाना बजाओ. सही संगीत सूर. बिलकुल सही टोन.

सारी प्रमुख खिलौने की दुकानों और वस्तुग्रहों में उपलब्ध.

एम एम टाय्स् इंडस्ट्रीज़ लिमिटेड

5 चंद्रबाग अवेन्यू, चन्नई 600 004

दोस्तों को दो ऐसा उपहार जो रहे जिन्दगी भर याद. मुफ्त बधाई कार्डों के लिए लिखें.

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

कला - एक सृजनात्मक रुचिकर्म

एन.सि.इ.आर.टी. भारत की एक प्रधान संस्था है, जो शैक्षिक क्षेत्र में लगातार अनुसंधान करती आ रही है। इस संस्था ने महसूस किया कि बच्चों में सृजनात्मक शक्तियों को बढ़ावा देना चाहिये। उसका सुझाव था कि चित्रलेखन व चित्रांकन विषय भी दसवीं कक्षा तक पाठ्यक्रम में सम्मिलित हों। जिन-जिन पाठशालाओं ने एन.सि.इ.आर.टी. की सलाहों को स्वीकार किया, उन्होंने अपने पाठ्यक्रमों में इनके लिए स्थान दिया और इसके लिए आवश्यक कला-अध्यापकों को भी नियुक्त किया। जिन पाठशालाओं का अपना पाठ्यक्रम था, अपनी योजनाएँ थीं, उन्होंने ने भी 'कला' को अध्ययन का विषय माना। हाँ, वे इस विषय में न ही परीक्षा लेंगी और न ही अगले कक्ष में प्रवेश के लिए अवश्यंभावी मानेंगे।

देश में ऐसी पाठशालाएँ अथवा संस्थाएँ गिनती में कम हैं। प्रकाश में आया है कि सरकारी व म्युनिसिपलाटियों द्वारा चलायी जानेवाली पाठशालाओं में इस दिशा में लापरवाही बरती गयी है, जिसके कारण इन विषयों में बच्चों की शिक्षा तथा वृद्धि नहीं हो पायी। अगर किन्हीं पाठशालाओं में चित्रलेखन पाठ्यक्रम का विषय भी रहा हो, पर तत्संबंधी अध्यापकों के पर्यवेक्षण में इसकी शिक्षा नहीं दी जा रही है बल्कि उन अध्यापकों के द्वारा दी जा रही है, जो इस कार्य के लिए नियुक्त नहीं हुए और जिनके पास कुछ न कुछ काम करने का मुफ्त समय है। चित्रलेखन व चित्रांकन की स्पर्धाओं को आयोजित करनेवाले संगठकों का अनुभव है कि प्रमुख सार्वजनिक पाठशालाएँ भी इन स्पर्धाओं में भाग लेने के लिए अपने विद्यार्थियों को प्रोत्साहित नहीं करतीं। शायद ऐसा करने में उनका उद्देश्य होगा कि वे समय बरबाद न करें और परीक्षाओं में अच्छे अंक पाने में पिछड़ न जाएँ।

चित्रलेखन व चित्रांकन से विद्यार्थियों में कल्पना-शक्ति उभरती है और उनकी प्रेक्षण-शक्ति तीव्र होती है। जिन्हें इस रुचिकर्म के प्रति झुकाव है, उन्हें प्रोत्साहित करना चाहिये और उनकी मदद भी करनी चाहिये। माता-पिता को यह समझना नहीं चाहिये कि इन्हें सीखने से भविष्य में उनके बच्चे चित्रकार बनकर रह जाएँगे, जिन्हें वे डाक्टर, इंजनीयर, वैज्ञानिक, वकील के रूप में देखना चाहते हैं।

वर्ष : ४७ | मार्च १९९७ | अंक : ६

एक प्रति : रु. ६/- | वार्षिक चन्दा : रु ७२/-
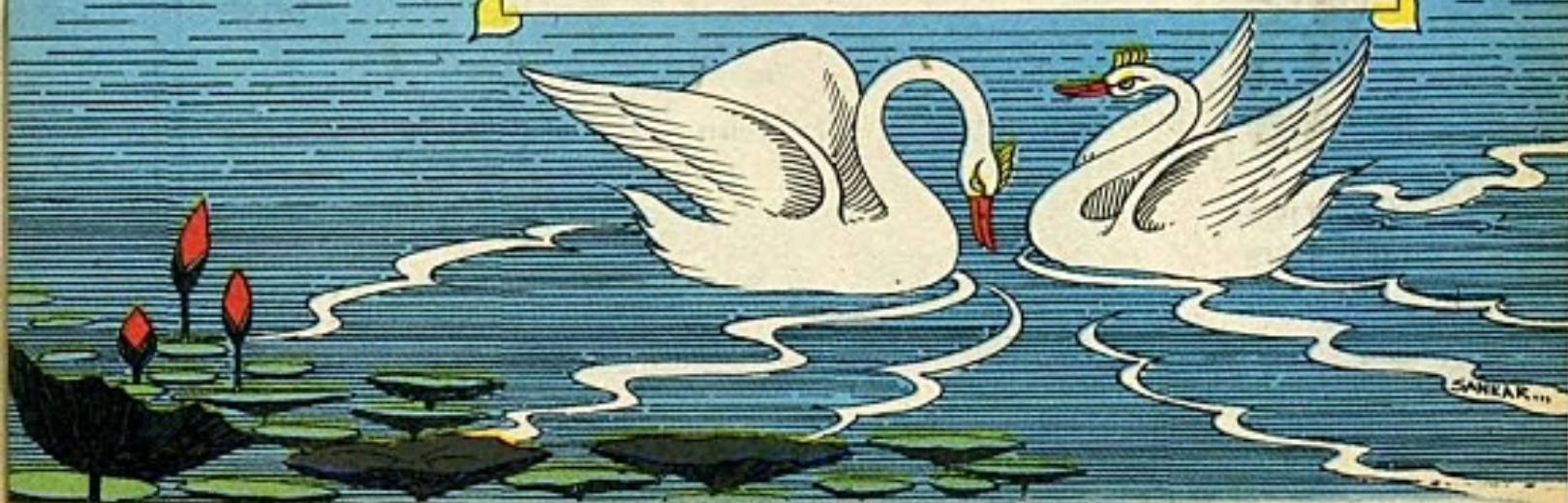
Statement about ownership of CHANDAMAMA (Hindi)
Rule 8.(Form VI), Newspapers (Central) Rules, 1956

1. Place of Publication	'CHANDAMAMA BUILDINGS' 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
2. Periodicity of Publication	MONTHLY Ist of each calender month
3. Printer's Name	B.V. REDDI
Nationality	INDIAN
Address	Prasad Process Private Limited 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
4. Publisher's Name	B.VISWANATHA REDDI
Nationality	INDIAN
Address	Chandamama Publications 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
5. Editor's Name	B.NAGI REDDI
Nationality	INDIAN
Address	'Chandamama Buildings' 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
6. Name and Address of individuals who own the paper	CHANDAMAMA PUBLICATIONS PARTNERS: 1. Sri B. VENKATRAMA REDDY 2. Sri B.V. NARESH REDDY 3. Sri B.V. SANJAY REDDY 4. Sri B.V. SHARATH REDDY 5. Smt. B. PADMAVATHI 6. Sri B.N. RAJESH REDDY 7. Smt. B. VASUNDHARA 8. Kum. B.L. ARCHANA 9. Kum. B.L. ARADHANA 'Chandamama Buildings' 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026

I, B Viswanatha Reddi, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

1st March 1997

B. VISWANATHA REDDI
Signature of the Publisher

समाचार-विशेषताएँ

अमेरीका के अध्यक्ष

अमेरीका के अध्यक्ष-भवन वैटहाउस में द्वितीय बार अध्यक्ष की शपथ लेने के बाद विलियम जफ़रसन क्लिंटन ने कहा कि मैं २०-२१ शताब्दियों के बीच का सेतु हूँ। बिल क्लिंटन इस शताब्दी के आख़िरी अध्यक्ष हैं और आनेवाली शताब्दी के प्रथम अध्यक्ष होंगे। यह उनकी विशिष्टता है। ये अमेरीका के ४२ वें अध्यक्ष हैं। द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद दूसरी बार चुने गये डेमोक्राट अध्यक्ष हैं, बिल क्लिंटन। यह भी इनकी विशिष्टता ही है।

अमेरीका में डेमोक्राट अध्यक्ष का दूसरी बार चुना जाना साठ सालों के पहले संभव हुआ। १९३२ में फ्रांक्लिन डिलानो रूजवेल्ट अध्यक्ष चुने गये। फिर १९३६ में वे पुनः अध्यक्ष निर्वाचित हुए। इतना ही नहीं, तीसरी और चौथी बार भी (१९४४) उन्होंने यह पद संभाला। विश्व-युद्ध की समाप्ति-काल में वे १९४५, अप्रैल, बारह तारीख को पद में रहते हुए दिवंगत हुए।

रूजवेल्ट के बाद हारी एस. ट्रूमन १९४५ में अमरीका के अध्यक्ष बने। १९६० में एक और डेमोक्राट नेता जान केन्नडी अध्यक्ष निर्वाचित हुए। १९६३, नवंबर, २२ तारीख़ को उनकी हत्या की गयी। उनके बाद लिंडन बी जानसन (डेमोक्राट) अध्यक्ष बने। उनके बाद निर्वाचित डेमोक्राट नेता थे जम्मी कार्टर (१९७७-८१)

१९९२ में बिल क्लिंटन पहली बार अध्यक्ष चुने गये। १९९३, जनवरी बीसवीं तारीख़ को इन्होंने पद स्वीकार किया।

सौ सालों के पहले याने इस शताब्दी के आरंभ में रिपब्लिकन दल के नेता विलियम मेक्लिनले अध्यक्ष थे।

१९९६ दिसंबर में जो चुनाव संपन्न हुए, उनमें क्लिंटन को ४९ प्रतिशत मत मिले। उनके प्रधान प्रत्यर्थी, रिपब्लिकन दल के उम्मीदवार राबर्ट डोल को ४१ प्रतिशत मत प्राप्त हुए। स्वतंत्र उम्मीदवार रास पेराट को आठ प्रतिशत मत प्राप्त हुए।

जनवरी २१ को पद-ग्रहण के बाद अपने प्रथम भाषण में बिल क्लिंटन ने मुख्यतया देश की एकता पर ज़ोर दिया। उन्होंने कहा कि अगले चार सालों में वे देश की एकता पर ही अधिकाधिक ध्यान देंगे। उन्होने घोषणा की कि अमेरीका "एक ही देश है, एक ही प्रजा है, एक ही लक्ष्य है" और इसी बुनियाद पर अमेरीका का पुनःनिर्माण होगा। उन्होंने कहा कि मेरी सरकार निराडंबर होगी, पर साथ ही दृढ़ भी। उन्होंने इस अवसर पर वचन दिया कि प्रकाशमान अमेरीका स्वतंत्रता-ज्योति को संसार भर में व्याप्त करेगा। क्लिंटन ने आशा व्यक्त की कि २१ वीं शताब्दी में 'प्रजातंत्र-संसार' की स्थापना होगी।

उपाय - धनी गोविंद

गोविंद गोपालपुर का निवासी था। वह बड़ा ही अक़्लमंद था। उसकी एक ख़ासियत थी। अगर कोई किसी दूसरे को अपनी वाक्-शक्ति तथा चतुराई से हराता या धोखा देता तो उस धोखेबाज़ को उसी प्रकार की अपनी चतुराई से पछाड़ देता था। उसे लेने के देने पड़ते थे।

एक बार सुशील पांडे नामक एक पुरोहित ने चंद्रधर गुप्ता के घर में केदार व्रत करवाया। व्रत की समाप्ति के बाद गुप्ता ने दक्षिणा के रूप में सवा रुपया पांडे को दिया और उसे प्रणाम किया।

सुशील पांडे ने उस दक्षिणा को अपनी तुंदी में घुसाते हुए कहा "गुप्ताजी, कम से कम चार रुपये की दक्षिणा देते तो अच्छा होता। मैं उससे तृप्त होता। आपने तो केवल सवा रुपया दिया, जो आप जैसे धनवान के लिए कुछ भी नहीं।"

गुप्ता हँस पड़ा और कहा "पांडेजी, शुभप्रद काम करना, हमारे पुरखों से चला आता हुआ आचार है। उनके ज़माने से हर साल केदार व्रत मनाते आ रहे हैं। वही पूजा करा रहे हैं। हमारा विश्वास है कि इतनी ही दक्षिणा देनी चाहिये, जो हमें रास आयेगी। इसी कारण मैंने आपको सवा रुपया दिया। आप बुरा न मानियेगा। परंपरा से चली आती हुई रीति को तोड़ना भी ठीक नहीं। है न?"

सुशील पांडे जान गया कि गुप्ता रीति की आड़ में झूठ बोल रहा है। इस स्थिति में भला वह क्या कर सकता था। जब वह लौट रहा था, तब उसने देखा कि गोविंद अपने घर के बाहर चबूतरे पर बैठा हुआ है। पांडे को मन ही इस बात का तीव्र दुख था कि गुप्ता ने उसे समुचित दक्षिणा नहीं दी। जान-बूझकर वह गोविंद के पास आया और बग़ल में बैठ गया। बिना पूछे ही उसने गोविंद को

उदय गिरीश

बताया कि गुप्ता के यहाँ केदार व्रत पूजा संपन्न करके आ रहा हूँ। गोविंद ने देखा कि पांडे का मुख कांतिहीन है तो उसने कहा "गुप्ता आजकल व्यापार में खूब कमा रहा है। क्या उसने दक्षिणा नहीं दी?"

"यही बात बताने तुम्हारे पास चला आया। गुप्ता उन लोगों में से है, जो शव को जलाने के लिए हिसाब लगाकर, गिन-गिनकर लकड़ियाँ श्मशान ले जाते हैं। एक भी लकड़ी अधिक जलायी जाए तो ज़मीन - आसमान एक कर देते हैं। ऐसे कंजूस को मैंने आज तक नहीं देखा। उल्टे उसने सवा रुपया दक्षिणा के रूप में देते हुए कहा कि परंपरा से चली आती हुई यह रीति है और इस रीति को तोड़ना मैं नहीं चाहता।" फिर पांडे ने सब कुछ बताया, जो वहाँ हुआ।

उसकी बातें सुनकर गोविंद ठठाकर हँसता हुआ बोला "तब तो गुप्ता को सामग्री उसी दाम पर बेचनी चाहिये, जिस दाम पर उसके दादा-परदादा बेचते थे। क्योंकि परंपरागत रीति का अनुसरण करना ही वह शुभप्रद मानता है। किन्तु शेष बातों में वह इस रीति को तोड़ रहा है; मनमानी कर रहा है; दाम बढ़ा-चढ़ाकर वस्तुएँ बेच रहा है। उसके दादा-परदादाओं के ज़माने में सवा रुपये में सेर भर का चावल मिलता था। पर अब दस रुपये चुकाने पर ही इतना चावल मिलता है। गुप्ता का कहना है कि तुम्हारे पुरखे केदार व्रत करने पर इतना ही लेते थे और उतना ही देने में उसकी भलाई है, उसे रास आता है। इसलिए तुम एक काम करो" कहकर

गोविंद ने पांडे के कान में कुछ कहा।

पांडे, गोविंद की सलाह सुनकर बहुत खुश हुआ। उस दिन शाम को गुप्ता की दुकान गया। सेर भर का चावल थैली में डाल लिया और सवा रुपया गुप्ता के हाथ में थमाया। गुप्ता ने आश्चर्य प्रकट करते हुए पूछा "यह क्या? इसका सही दाम दो।"

"गुप्ताजी, आपने मुझसे अपने दादा-परदादाओं के ज़माने से चला आता हुआ केदार व्रत करवाया और मुझे भी उसी ज़माने का पुरोहित ठहराकर सवा रुपया ही दिया, जो आपके पुरखे दिया करते थे। आपका कहना है कि यह रीति आपको रास आयी। मैंने भी अपने आपको उस काल का पुरोहित मान लिया और वही दाम चुकाकर सेर चावल ले जा रहा हूँ। अपने पौरोहित्य-धर्म को

एक बार मंगला नामक एक विधवा अपनी दो बेटियों को लेकर गोपालपुर आयी। उसके पति के मर जाने के बाद वह अपने भाई के यहाँ रहने लगी। पर उसकी भाभी उसपर व्यंग्य-बाण बरसाया करती थी "घर में आराम से बैठी खा-पी रही हो। तुम दरिद्रों, भिखमंगों की देखभाल, पता नहीं, मुझे कब तक करनी होगी।" मंगला से उसके दुतकार सहे नहीं जा सके और वह अपनी दोनों बेटियों को लेकर गोपालपुर चली आयी। एक घर किराये पर लिया और छोटा-सा भोजनालय शुरू किया। गोपालपुर की हाट में ईर्द-गिर्द के गाँवों के लोग बड़ी संख्या में आया करते थे। चूंकि उसकी रसोई रुचिकर होती थी, इसलिए ज़्यादा से ज़्यादा लोग उसी के भोजनालय में खाते थे।

भला मैं क्यों तोड़ूँ ? ऐसा करना ही मेरे लिए शुभप्रद होगा" पांडे ने कहा।

विषय जानकर दुकान के इर्द-गिर्द जो थे, सबके सब हँस पड़े। गुप्ता ने शरम से सिर झुका लिया। एक सप्ताह के अंदर ही गाँव के सब लोगों को मालूम हो गया कि यह अमूल्य सलाह देनेवाला कोई और नहीं, गोविंद ही है। सब लोग उसकी अक़्लमंदी और लौकिकता की तारीफ़ करने लगे।

पर गोविंद ने उनसे कहा "हम कभी-कभी धोखा खा जाते हैं। हमें जानना चाहिये कि इसके पीछे कौन-सा वह मरोड है, जिसकी लपेट में आकर हम धोखा खा जाते हैं। हमें चाहिये कि उसी मरोड का प्रयोग उन धोखेबाज़ों पर भी करों, जो उनके लिए फंदा साबित हो।"

उसी गाँव में किरण नामक एक व्यक्ति बहुत समय से भोजनालय चला रहा था। मंगला की वजह से उसका व्यापार ठप हो गया। उसने एक दिन दो आदमियों को पैसे देकर मंगला के भोजनालय में भेजा।

भोजन करते-करते उन दोनों ने साथ लाये तिलचट्टों को तरकारी में डाला और उन्हें हाथ में लेते हुए चिल्लाने लगे "वाह रे वाह। कैसा कलियुग आ गया। भोजन बेचना पाप है, तिसपर उसमें तिलचट्टे।" कहकर वहाँ से उठ गये। वहाँ भोजन करनेवालों में खलबली मच गयी। उन्होंने मंगला को डाँटा और कहा कि पकाते समय सावधानी न बरतने की वजह से ही ऐसा हुआ।

किरण चुप नहीं रहा। उसने इसी तरह किराये के आदमियों को दो-तीन बार उस

भोजनालय में भेजा और मंगला को तथा उस भोजनालय को बदनाम करता रहा। किसी दिन भोजन में कीलें होती थीं तो किसी दिन शाकाहारी भोजन में पके माँस का टुकड़ा होता था। इन घटनाओं के कारण वहाँ आनेवाले लोगों की संख्या घट गयी।

मंगला समझ गयी कि इस शरारत के पीछे किसी का हाथ है। उससे ईर्ष्या करनेवाला ही कोई ये काम करा रहा है। एक दिन वह गोविंद के पास गयी और उसे पूरा-पूरा विवरण दिया। उसने उसकी सलाह माँगी।

गोविंद ने उससे कहा "भिखारी का दुश्मन दूसरा भिखारी ही होता है। व्यापारी का शत्रु दूसरा व्यापारी ही होता है। अपने भोजनालय को नष्ट पहुँचते हुए देखकर किरण ने ही ये शरारतें करवायी होगीं। तुम एक काम करो। मोटेराम से बात करो। उसका अपना कोई नहीं है। दस-बीस आदमियों को वह आसानी से मार-पीट सकता है। उसमें इतना बल व साहस भी है। वह मज़दूरी करके ईमानदारी से जी रहा है। बिना पैसे लिए तुम उसे खाना खिलाओ। फिर वह तुम्हारा रक्षा-कवच बन जायेगा।"

मंगला ने मोटेराम को ख़बर भेजी और उससे कहा "मेरी देखभाल करनेवाला कोई नहीं रहा, इसलिए मैं सबकी दृष्टि में असहाय व अबला मात्र हूँ। मुझे और मेरे भोजनालय को बदनाम करने के लिए कोई षड्यंत्र रच रहा है। भोजन-पदार्थों में कुछ न कुछ मिलाकर यहाँ आनेवाले लोगों को डरा रहा हैं। तुम मेरा सहारा बनो। मैं तुम्हें मुफ़्त ही खिलाऊँगी और थोड़ा-बहुत धन भी

दूँगी।"

मोटेराम पहले इस बात पर नाराज़ हुआ कि मंगला उसे अपने किराये का गुँडा बनाना चाहती है। पर जब उसे मालूम हुआ कि उसने यह जिम्मेदारी गोविंद की सलाह पर ही उसे सौंपी तो वह शांत हुआ। एक हफ़्ते के अंदर ही मोटेराम मंगला के घर आ गया और वहीं रहने लगा। मंगला की बड़ी बेटी करुणा उसे अच्छी लगी। दिन गुज़रते-गुज़रते करुणा भी उसे चाहने लगी।

कुछ दिनों के बाद किरण ने फिर से दो नये आदमियों को मंगला के भोजनालय को बदनाम करने के इरादे से भेजा। भोजन करते हुए उन दोनों ने भोजन में से छोटी चिपकली निकाली और उसे लोगों को दिखाते हुए कुछ कहने ही वाले थे कि मोटेराम ने

उनकी गरदन पकड़ ली और उन्हें पीटते हुए कहने लगा "बताओ, इस शरारत के पीछे कौन है? तुम्हें यहाँ किसने भेजा? सच बताओ, नहीं तो तुम्हारी चमड़ी उधेड़ दूँगा।" वे डर गये और सबके सामने उन्हें बताना ही पड़ा कि किरण ने हमें भेजा।

तुरंत चार आदमी किरण को पकड़कर गोविंद के पास ले आये। गोविंद कुछ पूछे, इसके पहले ही किरण आँसू बहाता हुआ बोला "गोविंद, अब मैं जान गया कि तुमने ही मोटेराम को मंगला के घर भेजा। सच तो यह है कि मेरा व्यापार घटता जा रहा है, इसीलिए मैं किराये के गुंडों को मंगला के भोजनालय में भेजता रहा और उसे बदनाम करता रहा। जो भी सज़ा दोगे, मुझे स्वीकार है।"

"किरण, सज़ा देने के लिए मैं कोई ग्रामाधिकारी थोड़े ही हूँ। परंतु एक बात अच्छी तरह से याद रखो। दूसरों को हानि पहुँचानेवालों को भगवान कभी क्षमा नहीं करते। दूसरों की जो भलाई करते हैं, उन्हीं का शुभ होता है। जो हुआ, उसे देखते हुए सारे के सारे ग्रामीण तुमसे घृणा करने लग जाएँगे। तुम्हें दुष्ट समझेंगे। तुम्हारे जो अन्य छोटे-मोटे व्यापार हैं, वे भी बरबाद हो जाएँगे। अगर तुम चाहते हो कि गाँव में तुम्हारा फिर से अच्छा नाम हो तो एक काम करो। लोगों से कहना कि मंगला की दूसरी बेटी की शादी अपने बेटे से कराने जा रहा हूँ। यह भी लोगों से बताना कि मंगला अपने व्यापार में जागरूकता बरते, इसीलिए मैंने ऐसा काम किया। कहना कि किराये के गुंडों से कैसे बचना चाहिये, यही पाठ मंगला को सिखाने के लिए उसी की भलाई के लिए ही मैंने यह काम किया। फिर सब ठीक हो जायेगा। लोग तुम्हारी उदारता पर तारीफ़ के पुल बाँधेंगे।"

किरण गोविंद की सलाह अमल में ले आया। अब मंगला की दोनों बेटियों की शादी भी आसानी से हो गयी। मोटेराम ने, मंगला की बड़ी बेटी से शादी कर ली और भोजनालय की जिम्मेदारी स्वयं संभाली। विधवा मंगला अब विश्राम ले सकती है।

किरण को नयी बहू मिल गयी और साथ ही बदनामी से बाल-बाल बच गया। इस प्रकार यह कहानी सुखांत हुई। गाँव में गोविंद के उपायों की भरपूर प्रशंसा हुई।

चतुर

भूपाल, भुवनगिरि का पटवारी था। एक दिन घर के बाहर के चबूतरे पर बैठकर हिसाब-किसाब देख रहा था तो उसकी पत्नी ललिता आयी और कहने लगी "बेटी के सीमंत्रोन्नयन मनाने हमें शाम को समधी के गाँव जाना होगा। वहाँ महिलाओं में बाँटने के लिए मिठाइयाँ चाहिये। मैंने आज सबेरे आपको बताया भी। क्या याद है आपको?"

"याद क्यों नहीं। अभी वह काम कर दूँगा।" भूपाल ने कहा और पत्नी को अंदर भेज दिया। उसने देखा कि श्याम गली में जा रहा है। वह साधारण किसान है। भूपाल ने उसे बुलाया और धीमे स्वर में कुछ कहके उसे भेज दिया। फिर थोड़ी देर बाद उधर ही से गुज़रते हुए पीतल को बुलाया और उससे भी कुछ बताकर भेज दिया।

ललिता फिर से बाहर आयी और कहा "लगता है, अपने काम-काजों में डूबकर मिठाइयों की बात भूल ही गये।"

"नहीं, नहीं। उसी काम पर लगा हुआ हूँ।" भूपाल ने कहा। अपने पति को संदेह-भरी नज़र से देखती हुई वह अंदर चली गयी।

बाद रास्ते से गुज़रते हुए दो और आदमियों को भूपाल ने बुलाया और उनसे भी कुछ बताकर अपने काम में लग गया।

अंदर ही रहकर ललिता यह सब कुछ देख रही थी। उससे रहा न गया तो बाहर आकर उसने पति से कहा "रास्ते से गुज़रते हुए लोगों को बुला रहे हैं और उनसे बातें कर रहे हैं। पर मिठाई लाने का नाम ही ले नहीं रहे हैं।" "देख नहीं रही हो? जितने भी लोगों से मैंने बातें कीं, वे सब मिठाइयाँ लाने के प्रयत्नों में ही लगे हुए हैं।" भूपाल ने हँसते हुए कहा।

"मैं कोई बेवकूफ़ नहीं। मिठाइयाँ लाने के लिए इतने आदमियों को भेजने की क्या

उषा रानी

ज़रूरत है? क्या एक आदमी इस काम के लिए काफ़ी नहीं ? मुझे विश्वास नहीं होता। आप मेरी ही उपस्थिति में किसी आदमी को इस काम पर लगाइये। तब तक मैं यहाँ से हटूँगी नहीं।'' ललिता ने ज़ोर देकर कहा।

भूपाल ने हँसते हुए कहा ''हम मिठाइयाँ खरीदना चाहते तो हैं, परंतु वह गुरु गुप्ता मिठाइयाँ बेचने तैयार नहीं।''

''यह तो अजीब बात हुई। हम थोड़े ही उसका घर खरीदना चाहते हैं। उसका व्यापार है, मिठाइयाँ बेचना। इसी के लिए तो उसने दूकान खोल रखी है। तैयार न होने का क्या मतलब हुआ? बात असल में क्या है, साफ़-साफ़ बताइये न?'' ललिता ने पूछा।

''अब सुनो, बात क्या है। गुप्ता की दूकान गया और मिठाइयों के दामों का विवरण माँगा। उसने स्पष्ट बता दिया कि मन भर की कोई भी मिठाई सौ रुपयों से कम नहीं है। मिठाई अच्छी है और रुचिकर भी। वह क़ीमत कम करे, इसके लिए मैंने एक उपाय सोचा। उसी को कार्यान्वित करने के लिए मैंने इन आदमियों को उसकी दुकान में भेजा। जो-जो गये, वे सब मिठाइयों के मूल्य को लेकर उससे बातें करेंगे और थोडा-बहुत चखेंगे। वे चखने के बाद मिठाइयों की बुराई के बारे में तरह-तरह की टिप्पणियाँ करेंगे। वे कहेंगे कि मिठाइयों में जो आटा मिलाया गया है, वह मिलावट का है। कहेंगे कि मिठाई बहुत पुरानी है। यह भी कहेंगे कि मिठाई जिस घी से बनायी गयी है, वह शुद्ध घी नहीं है, उससे बदबू आ रही है। ऐसा कहकर बिना मिठाइयाँ खरीदे वहाँ से चले जाएँगे। सबों की टिप्पणियाँ सुनने के बाद गुरु गुप्ता को यह विश्वास होने लगेगा कि मिठाइयों में सचमुच कोई खोट है। इसलिए इन मिठाइयों को बेच डालने के लिए उनका आधा दाम घटा देगा। जब दाम घटा देगा, मेरे भेजे आदमी तब मिठाइयाँ खरीदकर ले आयेंगे।''

इतने में श्याम थैली भर की मिठाइयाँ ले आया ''महाशय, आपके कहे मुताबिक ही गुरु गुप्ता ने मिठाइयों का दाम आधा कर दिया। आज मन भर की मिठाई का दाम पचास ही रुपये हैं।''

बैठे-बैठे पति के किये इस काम को देखकर, उसके चातुर्य पर आश्चर्य प्रकट करती हुई ललिता वहीं खड़ी रह गयी।
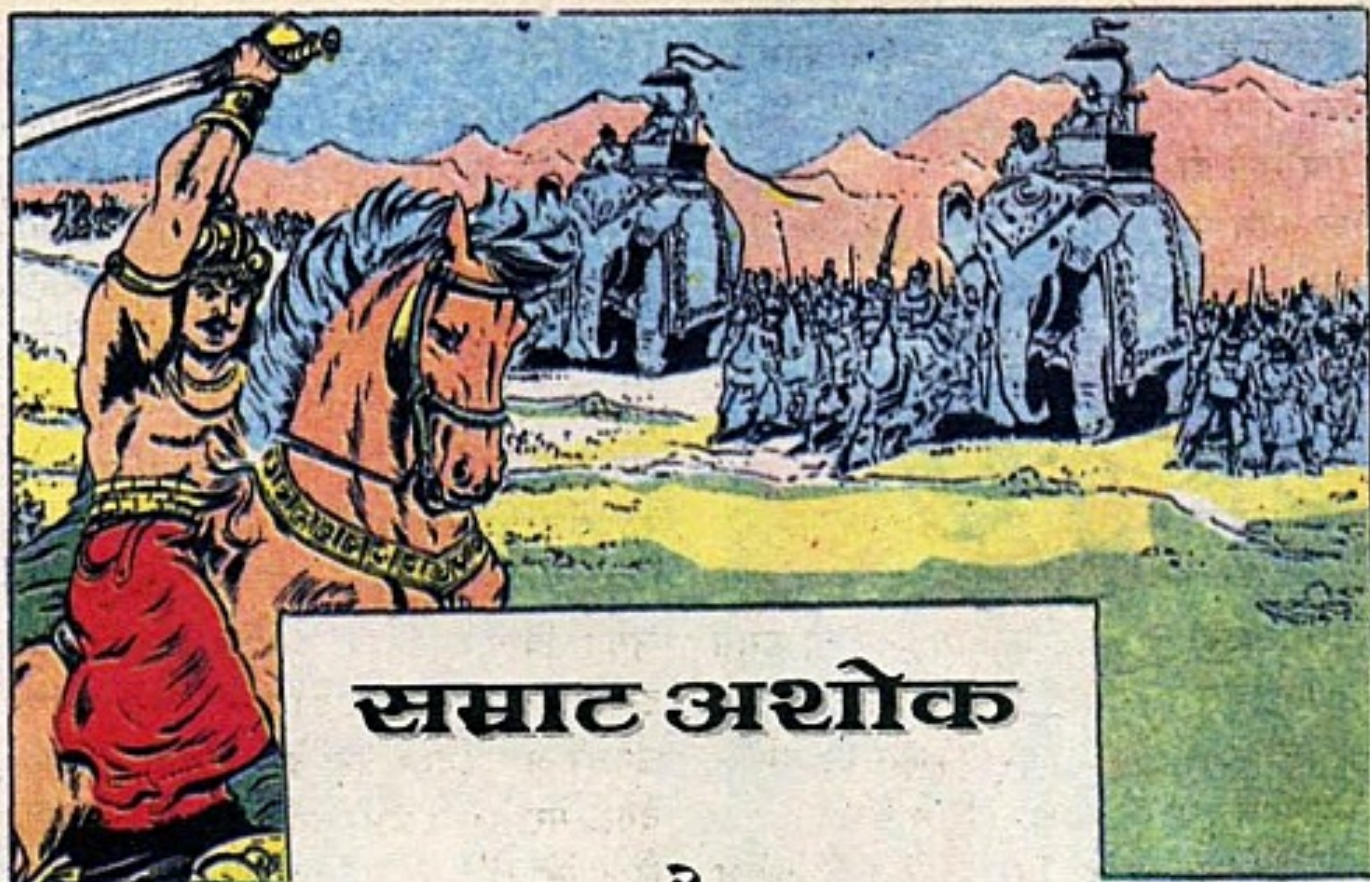
(मगध की राजधानी पाटलीपुत्र में चाणक्य की मदद से चंद्रगुप्त राजा बना और मौर्य वंश की स्थापना की। चंद्रगुप्त के बाद उसका बेटा बिंदुसार राजा बना। एक दिन एक दरिद्र ब्राह्मण, अपनी पुत्री सुभद्रा के साथ वहाँ आया। उसने राजा को अपनी बेटी सौंपते हुए कहा ''ज्योतिषियों का कहना है कि भविष्य में मेरी बेटी महारानी बनेगी। आप इससे विवाह कीजिये''। राजा ने 'हाँ' तो कह दिया पर राज्य-संबंधी कार्यकलापों में व्यस्त हो जाने के कारण यह बात भूल गया। दो सालों के बाद जब यह बात संयोगवश याद आयी तो उसने निर्णय लिया कि सूर्यास्त हो जाने के पहले सुभद्रा से विवाह करूँगा।)-बाद

राजा की आज्ञा के अनुसार नगर में घोषणा हुई कि राजा सुभद्रा से विवाह करनेवाले हैं। नगर की गलियाँ केले के पेड़ों, आम के तोरणों व रंग-बिरंगे फूलों से सजायी गयीं। अब नगर की शोभा देखने योग्य है।

भाग्यवश, सुभद्रा का पिता उसी दिन अपनी पुत्री को देखने के लिए राजधानी आया। उसने सोचा कि बेटी सुभद्रा का विवाह हो गया होगा और अब वह रानी बनकर अंत:पुर में आराम से रहती होगी। जब उसने जाना कि अभी-अभी उसका विवाह होनेवाला है, तो उसे आश्चर्य भी हुआ और आनंद भी। उसकी समझ में नहीं आया कि उसके विवाह में इतना विलंब क्यों हुआ। जब वह राजभवन के निकट आया, तभी उसे मालूम हुआ कि सैनिक उसे यह समाचार सुनाने के लिए उसका गाँव जाने निकल रहे हैं। उसे देखते ही बड़े ही आदर

भाव से वे उसे राजभवन ले गये। थोड़ी ही देर में आस्थान ज्योतिषियों से निर्धारित शुभ-मुहूर्त पर सुभद्रा का विवाह बिंदुसार से संपन्न हुआ। अपने वचन के अनुसार सूर्यास्त के पहले ही राजा ने सुभद्रा से शादी की। सुभद्रा के पिता ने वर-वधू को आशीर्वाद दिया।

सुभद्रा ने दो वर्षों तक राजभवन में परिचारिका की तरह अपना जीवन बिताया। अब वह महारानी बनी। उसकी वेष-भूषा में कायापलट हो गया। उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए परिचारिकाएँ नियुक्त हुईं और उसके रहने के लिए एक विशिष्ट कक्ष का प्रबंध हुआ।

इतना सब कुछ पाने के बाद भी, उसकी मनोभिलाषा की पूर्ति के बाद भी अब उसके आनंद में रुकावट कैसी? किन्तु वह खुश रह नहीं सकी। क्योंकि राजा की और रानियाँ जब-जब मौक़ा मिलता, तब-तब व्यंग्य-भरी बातों से उसे सताने लगीं। उसी की उपस्थिति में आपस में कहने लगीं "देखा, एक भिखमंगे की बेटी अपने भाग्य पर कितना इतरा रही है। ब्राह्मण कन्याएँ लज्जा त्यजकर यों राजभवनों में प्रवेश करें तो हम राजकुमारियों का क्या प्रयोजन। हम राजकुमारियाँ पैदा होती हैं, राजाओं से विवाह रचाने के लिए। किन्तु ऐसी स्त्रीयाँ हमारे अधिकार को छीनने पर तुल जाएँ तो हमारा क्या होगा। क्या हम किसी दरिद्र से शादी करके तृप्त हो जाएँ। ऐसा कभी नहीं होने देंगी। हम भी देखेंगी न कि इसका भाग्य कब तक चमकता रहेगा।" वे कहती जातीं और हँसती जातीं।

सुई की तरह चुभती हुई उनकी बातों को सुनकर सुभद्रा का हृदय पीड़ा से छटपटाता था। वह चुपचाप सब कुछ सहती रही, अंदर ही अंदर घुलती रही, पर कभी भी अपने पति से इस बारे में कुछ नहीं कहा। वह स्वाभाव से ही ऐसी थी। उसका विश्वास था कि वहीं होगा, जो भाग्य में लिखा है। राजा भी अपने राज्य-संबंधी कार्यकलापों में सदा व्यस्त रहता था। वह राजभवन की अंत:पुर को जानने की स्थिति में नहीं था।

एक वृद्ध परिचारिका पहले से ही सुभद्रा को बहुत चाहती और मानती थी। एकांत में बिलखती हुई सुभद्रा से उसने कहा "वे तुमसे जलती हैं। इसीलिए वे तुम्हें सता रही हैं; मुँह में जो आया, बक रही हैं। उनकी बातों को लेकर व्यथित मत होना। इस भवन में तुम
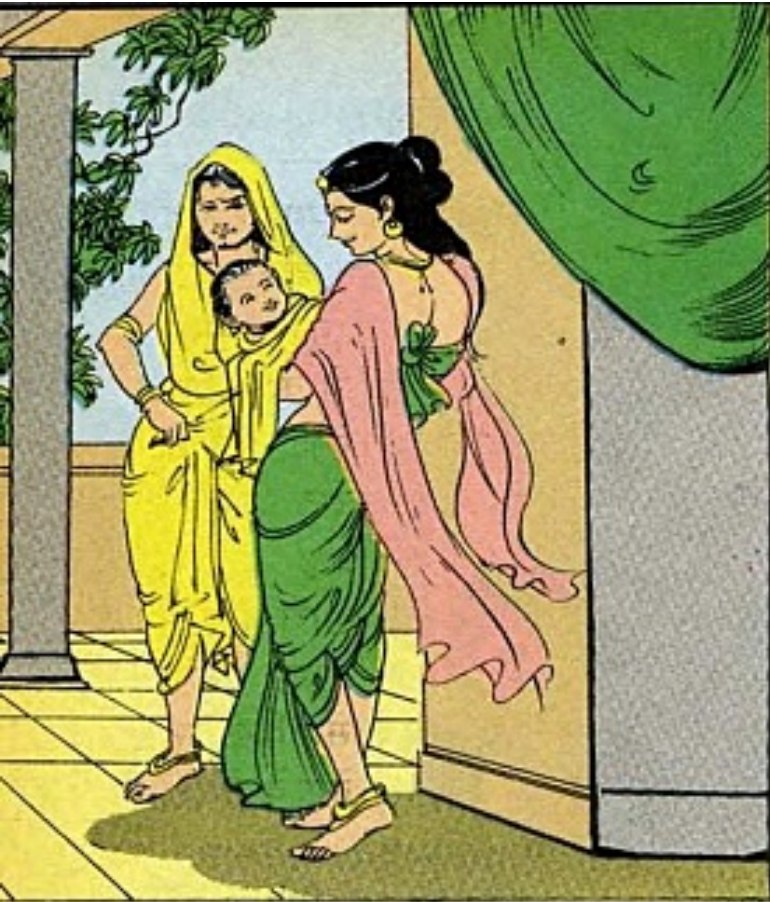
सबके अधिकार समान हैं। उम्र में चाहे वह बड़ी क्यों न हों, परंतु तुम सबके अधिकार एकसमान हैं।'' यों उसने सांत्वना दी। उसकी बातों पर सुभद्रा मुस्कुराकर चुप रह जाती थी। किन्तु उस मुस्कुराहट में संतोष से अधिक विषाद की मात्रा अधिक होती थी।

यों एक साल गुज़र गया। सुभद्रा ने पुत्र को जन्म दिया। कांतियाँ बिखेरनेवाले उस पुत्र को देखती हुई वह कहती ''पुत्र, तुम्हारे आगमन से मेरा शोक दूर हो गया। मेरे शोक का नाश करनेवाले अशोक हो तुम।'' कहकर दोनों हाथों से अपने पुत्र को उठाकर चूमती रहती थी। उसका नाम भी रखा -अशोक।

अशोक के जन्म के पहले ही तीनों रानियों ने पाँच बेटों को जन्मा था। उनमें से सुशेम बड़ा था। सब लोग बचपन से ही उसे युवराज मानने लगे। अतः राजकर्मचारी उसके प्रति असीम आदर की भावना जताने लगे। इस कारण उसमें अंहकार बढ़ता गया। उसकी इच्छा के विरुद्ध जो चलते थे, उन्हें वह कड़ी से कड़ी सज़ा देता था। कोई उसका विरोध करता तो वह उसपर पिल पड़ता था। उसका कहा काम न किया जाए तो सेवकों को मारता था। कोई भी उसके विरुद्ध बोलने का साहस नहीं करता था। क्योंकि उनका विचार था कि सुशेम ही सिंहासन का उत्तराधिकारी है।

सुशेम, अशोक से तीन साल बड़ा है। वे अब नवयौवन में प्रवेश कर चुके। वे दोनों एक दिन जब राज-उद्यानवन में विचर रहे थे तब उस ओर से गुज़रते हुए माली ने अशोक को प्रणाम किया। सुशेम ने हठात् माली को नीचे गिराया और क्रोध में अंधा होकर कहने लगा ''मेरा अपमान करने पर तुल गये।'' माली धीरे-धीरे उठा और कहा ''भला मैं आपका आपमान करने का साहस क्यों करूँगा प्रभू।''

''तो क्यों इस दासी के पुत्र को ही प्रणाम किया ?'' सुशेम गरज उठा। ''भैय्या, आदर से बात कीजिये ? आपकी माँ मेरी माँ समान हैं। मेरी माँ भी आपकी माँ समान है।'' अशोक ने कहा।

''छी, चुप हो जा। फिर एक और बार ऐसी बात मुँह से न निकालना। तुम्हारी माँ मेरी माँ नहीं है, माँ नहीं हो सकती। मेरी माँ तुम्हें अपना पुत्र माने, यह इस जन्म में संभव नहीं।'' सुशेम ने उसकी खिल्ली उड़ायी।

''हम दोनों महाराज बिंदुसार के पुत्र हैं। मेरी माँ का अपमान महाराज का अपमान है।'' अशोक ने मंद स्वर में समझाया।

"तुम्हें और तुम्हारी माता का अपमान करने में मुझे आनंद मिलता है। आख़िर तुम कर भी क्या सकते हो ?" सुशेम ने दर्प-भरे स्वर में कहा।

"मुझे आनंद तब मिलेगा, जब तुम अपनी इस धूर्तता के लिए क्षमा माँगोगे" कहकर अशोक ने उसका हाथ पकड़ लिया और मरोड़ा।

सुशेम छोड़ो, छोड़ो कहकर ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगा और दर्द-भरे स्वर में कराहने लगा। किन्तु अशोक ने उसका हाथ नहीं छोड़ा। माली उद्यानवन से दौड़ा-दौड़ा बाहर आया और उस तरफ़ से गुज़रते हुए मंत्री से यह बात बतायी। वहाँ आकर मंत्री चिल्लाता रहा "छोड़ो, उसे छोड़ दो।"

अशोक ने सुशेम का हाथ छोड़ दिया और मंत्री की ओर देखा।

"बड़े भाई के साथ ऐसा व्यवहार उचित है ?" मंत्री ने पूछा।

"इसने बड़े भाई की तरह व्यवहार नहीं किया। अविवेकी शत्रु की तरह बातें करता रहा। अपनी माँ और पिता का अपमान मुझसे सहा नहीं जायेगा। आगे कभी फिर से उनके बारे में अपमानजनक ऐसी बातें की तो उसका हाथ नहीं, गर्दन मरोड़ दूँगा।" अशोक ने क्रोध-भरे स्वर में कहा।

सुशेम ने अशोक को क्रोध-भरी दृष्टि से देखा और वहां से तेज़ी से चला गया। मंत्री को लगा कि वह अवश्य किसी दिन इस अपमान का प्रतिशोध लेगा; अशोक के विरुद्ध कुछ न कुछ कर बैठेगा।

चंद्रगुप्त ने नंदों को हराया। मौर्यवंश की स्थापना में सहायता पहुँचानेवाले चाणक्य तथा बिंदुसार का प्रधान सलाहकार बना रहा। दोनों राजकुमारों में सुलगते हुए प्रतिशोध की ज्वाला के बारे में मंत्री ने एक

ही आवश्यक है। इस स्थिति में हमारा चुप रहना अच्छा नहीं है।''

मंत्री, चाणक्य को प्रणाम करके वहाँ से चला गया। एक दिन सायंकाल के समय भवन के बाहर विचरते हुए राजा से मिलने चाणक्य आया। राजा बिंदुसार ने उसे प्रणाम करते हुए कहा ''आप खबर भेजते तो मैं स्वयं उपस्थित होता।''

''आपके पुत्रों में से किसी एक को मौर्य सिंहासन पर आसीन होने के योग्य घोषित करने तथा उसे इसके लिए सन्नद्ध करने का समय आसन्न हो गया। यह आपको याद दिलाना अपना कर्तव्य समझा'' चाणक्य ने कहा।

राजा चौंक पड़ा और कहा ''क्या मेरा ज्येष्ठ पुत्र युवराज सुशेम मौर्य राज्य के सिंहासन पर आसीन होने के योग्य नहीं है?''

''ज्येष्ठ पुत्र सिंहासन का उत्तराधिकारी है। यह चला आता हुआ संप्रदाय है। किन्तु सभी संदर्भों में यह वांछनीय नहीं है। जो दक्ष हो, उसी का राज्याभिषेक होना चाहिये। राज्य की इसी में भलाई है'' चाणक्य ने अपना विचार व्यक्त किया।

राजा बिंदुसार को मालूम है कि चाणक्य मितभाषी है और जो भी कहता है, सोच-विचारने के बाद ही कहता है। उसने जान लिया कि चाणक्य ने अपने ज्येष्ठ पुत्र के बारे में उसे सावधान किया और संकेत दिया कि इस विषय में पुनः सोचा-विचारा जाए। उसको लगा कि चाणक्य के ऐसे कथन के पीछे अवश्य ही कोई सबल कारण होगा।

''राजन, इस विषय में हम जल्दबाज़ी न

दिन चाणक्य को बताया।

''घिरे हुए प्रशंसकों की लपेट में आकर सुशेम अपना मार्ग भूलता जा रहा है। अशोक अभी किशोर है। भविष्य में उसके अच्छे होने के आसार हैं। हो सकता है कि वह भी सन्मार्ग चूक जाए। यह सब कुछ परिस्थितियों पर निर्भर है।'' चाणक्य ने गंभीरता से कहा।

''बात तो ठीक है महोदय। किन्तु मेरा संदेह है कि महाराज, सुशेम का समर्थन कर रहे हैं। उनका झुकाव उसी की ओर है। मेरी अंतरात्मा कहती है कि अहंभावी सुशेम अगर सम्राट बना तो मौर्य साम्राज्य संकट-ग्रस्त होगा।'' मंत्री ने कहा।

चाणक्य मौन हो कुछ देर तक सोचता रहा और फिर कहा ''फिर अपने ज्येष्ठ पुत्र के बारे में राजा के भ्रमों को दूर करना बहुत

करें। राजकुमारों को मालूम होना चाहिये कि हमने अब तक इस दिशा में कोई निर्णय नहीं लिया कि राजा कौन हो और किसे राजसिंहासन पर बिठाना है। उन्हें यह भी जानना आवश्यक है कि हम उनकी गति-विधियों तथा व्यवहार-शैली को गौर से देखते आ रहे हैं। सुशेम को लगना नहीं चाहिये कि ज्येष्ठ पुत्र होने के नाते उसी को राजा बनने का हक़ है। क्या यह हक़ उसे इसलिए मिलना चाहिये, क्योंकि वह अन्य राजकुमारों से उम्र में बड़ा है? हमें चाहिये कि हम कभी-कभी उनकी अक़्लमंदी की भी परीक्षा लेते रहें।'' चाणक्य ने कहा।

''जैसा आप चाहते हैं, वैसा ही होगा। ऐसी परीक्षा तुरंत ली जाए तो मुझे कोई आपत्ति नहीं।'' बिंदुसार ने कहा।

''मैंने इस विषय में भी सोच लिया। कल सूर्योदय तक अपने छहों बेटों को नगर की उत्तरी दिशा में स्थित शिवालय में आने के लिए कहिए। वे वहाँ जब आयेंगे तब उन्हें अपने उत्तम वाहन पर आना होगा। आने के पहले बलवर्धक आहार खाकर आयें, मंदिर में प्रवेश करने के बाद मूल्यवान आसन पर आसन हों।'' कहकर चाणक्य वहाँ से चला गया। चाणक्य के कहे अनुसार राजा ने अपने पुत्रों को संदेश भेजा। दूसरे दिन सूर्योदय के पहले ही राजा बिंदुसार, चाणक्य, मंत्रिगण, राजकर्मचारी आदि सब शिवालय के प्रांगण में आये। सूर्योदय होते ही राजकुमार एक-एक करके आने लगे।

युवराज सुशेम दो घोड़ों से सजे रथ में आया। दूसरा राजकुमार आभरणों से अलंकृत हाथी पर बैठकर आया। तीसरा राजकुमार सुँदर व सुदृढ़ घोड़े पर बैठकर आया।

चौथा व पाँचवाँ राजकुमार पालकियों में बैठकर आये। अशोक सबके आ जाने के बाद अंत में बिना किसी वाहन के पैदल चलता हुआ ठीक समय पर वहाँ आया।

आलय-मंडप में राजकुमारों ने अपने आसनों को खुद चुन लिया। दो राजकुमार अपने साथ दंत से बने सिंहासन ले आये थे। वे उनपर बैठ गये। दो और राजकुमार मुलायम कपास से बने बिस्तरों पर बैठ गये। पाँचवां राजकुमार बाघ का चर्म बिछाकर उसपर बैठ गया। अशोक अपने साथ कुछ नहीं लाया।

अशोक को देखकर शेष राजकुमार आप ही आप हँसने लगे। राजा को भी अशोक का

बरताव बड़ा ही विचित्र लगा।

चाणक्य ने राजकुमारों को संबोधित करते हुए कहा "आपके वाहनों व आसनों को हमने देखा। अब यह बताइये कि आज प्रातःकाल आपने क्या खाया ?"

राजकुमारों ने जो-जो पकवान खाये, सविस्तार बताया। बताते समय उनमें होड़ की भावना अच्छी तरह से व्यक्त हो रही थी।

बाद चाणक्य ने अशोक से पूछा "तुम राजकुमार हो, तुम्हारे पास कितने ही वाहन हैं। उनका तुमने उपयोग क्यों नहीं किया ? पैदल ही क्यों चले आये ?"

"महोदय, आपका आदेश था कि मैं उत्तम वाहन का ही उपयोग करूँ। मैं अपने चरणों को उत्तम वाहन मानता हूँ। मेरी दृष्टि में मनुष्य के लिए अपने चरणों से बढ़कर कोई श्रेष्ठ वाहन नहीं है।" अशोक ने कहा।

"अच्छा, अब बताओ कि तुम क्या खाकर आये ?" चाणक्य ने पूछा।

"प्याले भर की दही।" अशोक ने कहा।

"मेरा तो आदेश था कि तुम कोई बलवर्धक आहार खाकर आओ। किन्तु तुम तो प्याले भर की दही खाकर आये।" चाणक्य ने आश्चर्य-भरे स्वर में कहा।

"मैं पुत्र हूँ। माँ ही जानती है कि कब, कैसा बलवर्धक आहार पुत्र को खिलाना चाहिये। मेरी माँ ने मुझे प्याले भर की दही दी। चुपचाप खाकर यहाँ चला आया।" अशोक ने कहा।

चाणक्य ने पुनः आश्चर्य से पूछा "यह क्या? इस सख़्त ज़मीन पर बिना किसी आसन के क्यों बैठ गये ?"

"महात्मा, आपने मूल्यवान आसन पर बैठने को कहा था। पर क्या भूमि से बढ़कर कोई मूल्यवान आसन इस विश्व में है ? इसीलिए मैंने भूमि को अपना आसन बनाना उत्तम समझा" अशोक ने जवाब दिया।

"अद्‌भुत समाधान।" राजा के पीछे खड़े मंत्रियों व राजकर्मचारियों ने मुक्तकंठ से कहा।

चाणक्य ने मुस्कुराकर कहा "मैं तुम्हारा अभिनंदन करता हूँ।" कहते हुए उसने बड़े प्यार से अशोक की पीठ का स्पर्श किया।

अपने पुत्र की बुद्धिमत्ता पर राजा को आश्चर्य हुआ और आनंद भी।

-सशोष

इंद्रजाल - गंधर्वमाया

असफलताओं ने विक्रमार्क को निराश नहीं किया। उसकी दृष्टि में वे परीक्षाएँ हैं, जिनमें उत्तीर्ण होने पर ही लक्ष्य साधा जा सकता हैं। कोई और होता तो अपनी अशक्तता स्वीकार करता और रास्ता नापता। परंतु धुन के पक्के विक्रमार्क ने बेताल की सफलता और अपनी असफलता के बारे में सोचा तक नहीं। लक्ष्य ही उसका केंद्रबिंदु है। वह पुनः पेड़ के पास गया और शव को उतारकर अपने कंधे पर डाल लिया। यथावत् मौन श्मशान की तरफ़ बढ़ा। तब शव के अंदर के बेताल ने कहा ''राजन्, तुम्हारी दीक्षा व व्रत मुझमें कुतूहल जगा रहे हैं। तुम्हारे इस कठोर परिश्रम को देखते हुए मुझमें तुम्हारे प्रति अपार सहानुभूति उत्पन्न हो रही है। एक देश के राजा हो, पर कर रहे हो, एक सेवक का काम। बहुत प्रयत्न करने के बाद भी मैं जान नहीं पाया कि तुम ऐसा क्यों कर रहे हो ?

बैताल कथा

हो सकता है, और लोग अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ऐसा करें। परंतु तुम तो आवश्यकताओं से परे हो। तुम्हें जो चाहिये, चुटकी बजाने मात्र से मयस्सर हो जायेगा। कहीं ऐसा तो नहीं कि क्षुद्र शक्तियों को हस्तगत करके अपनी असाध्य इच्छाओं को साधने का तुम्हारा उद्देश्य है। तब तो मेरी बात ध्यान से सुनो। क्षुद्र शक्तियाँ ही नहीं, देव शक्तियाँ भी चाहे मनुष्य की इच्छाएँ पूरी क्यों न करें, पर उनसे प्राप्त होनेवाला आनंद तात्कालिक होता है। मेरा विश्वास है कि अंत में ये शक्तियाँ मन की शाँति को दूर करती हैं। उदाहरण के लिए एक बुद्धू व मूर्ख राजकुमारी की कहानी मुझसे सुनो। जन्म से ही वह बदसूरत थी। अद्भुत सुंदरी होने का भाग्य भी उसके हाथ आया। पर जान-बूझकर उसने इस भाग्य को भी ठुकरा दिया। उसकी कहानी मुझसे सुनो''।

रत्नपुरी का राजा था यशवर्मा। वह सूक्ष्म बुद्धिमान था। महारानी वसुधादेवी बड़ी ही सुंदरी थी। लंबी अवधि के बाद उनकी एक पुत्री हुई। किन्तु जन्म से ही कुरूपिणी थी।

ऐसी पुत्री को जन्म देने के कारण राजदंपति बहुत ही दुखी हुए, फिर भी उन्होंने अपनी पुत्री को बड़े लाड़-प्यार से पाला - पोसा। उसका नाम रखा मणिमंजरी। भगवान दयावान् है, इसका प्रमाण है मणिमंजरी। यद्यपि भगवान ने उसे सुंदर रूप नहीं दिया पर बड़ा ही मधुर कंठ-स्वर दिया। बारहवें वर्ष में ही वह संगीत में निष्णात हुई। वीणा बजाना भी उसने सीख लिया। वीणा बजाती हुई जब गाने लगती थी, तब पामर व पंडित भी तन्मय हो जाते थे और उन्हें ऐसा लगता था मानों किसी और लोक में विचर रहे हों।

देखते-देखते मणिमंजरी ने यौवन में प्रवेश किया। राजदंपति को अब उसका विवाह एक समस्या बन गयी। कोई राजकुमार एक बदसूरत राजकुमारी से भला शादी क्यों करेगा। पुत्री के भविष्य को लेकर वे चिंताग्रस्त हो गये।

पूर्णिमा की रात को मणिमंजरी उद्यानवन के अशोक वृक्ष के तले अकेली बैठी वीणा बजाती हुई गाने लगी। उस समय आकाश में विचरती हुई वेदचंदना नामक गंधर्व कन्या उस मधुर स्वर को सुनकर मुग्ध हो गयी। उद्यानवन में वह उतरी और राजकुमारी के पास आकर कहा ''आहा, कितना मधुर स्वर है। हमारे गंधर्व लोक में भी कोई इतने मधुर

स्वर में गाने की शक्ति नहीं रखते ।'' यों उसने उसका अभिनंदन किया ।

हठात् ही अपने सम्मुख खड़ी गंधर्व कन्या को देखकर मणिमंजरी निस्तेज हो गयी । उसने गाना रोक दिया और उठ खड़ी हुई । सुवर्ण प्रतिमा की तरह शोभायमान उस गंधर्व कन्या को वह बिना पलक मारे देखती रही ।

आश्चर्य में डूबी मणिमंजरी को देखकर वेदचंदना ने उसके मन की बात भाँप ली । मुस्कुराती हुई उसने अपने दायने हाथ की प्रवाल अंगूठी निकालकर मणिमंजरी की उँगली में पहना दी और कहा ''राजकुमारी, यह महिमामयी अंगूठी है । इसे जो पहनते हैं, वे दूसरों को मेरे ही रूप में अति सुंदर लगते हैं । तुम्हें आगे से अपने कुरूप पर चिंतित होने की आवश्यकता नहीं है । परंतु, हाँ, तुम्हें तो अपना निजी रूप ही दिखेगा । एक और बात सदा स्मरण रखना । इस अंगूठी को पहनकर कभी भी, किसी भी स्थिति में मंदिर मत जाना । इस अंगूठी को पहनकर मंदिर में भगवान का दर्शन करने जाओगी तो शाश्वत रूप से इस अंगूठी की महिमा लुप्त हो जायेगी ।'' यों उसे सावधान करके गंधर्वकन्या आकाश मार्ग से चली गयी । मणिमंजरी निर्णय नहीं कर पा रही थी कि यह स्वप्न है या सच ? इतने में राजदंपति वहाँ आये । अशोक वृक्ष के नीचे चमकती हुई सुवर्ण प्रतिमा की तरह खड़ी युवती को देखकर वे आश्चर्य में डूब गये ।

इस धक्के से महाराज संभल गया और उससे पूछा ''कौन हो तुम पुत्री । हमारी मणिमंजरी कहाँ है ?'' उसने देखा कि वहाँ रखी वीणा उनकी बेटी की ही है ।

मणिमंजरी ने ''पिताश्री'' कहकर पिता का आलिंगन किया । राजदंपति ने अपनी पुत्री का कंठ-स्वर पहचाना । किन्तु रूप में कोई साम्य नहीं था, इसलिए वे कुछ बोल न सके । वे स्तंभित हो उसी को देखते रह गये ।

तब मणिमंजरी ने गंधर्वकन्या के बारे में पूरा विवरण बताया । महारानी अपने कुतूहल पर काबू पा न सकी । उसने बेटी की अंगूठी खुद अपनी उंगली में ड़ाल ली । अब महारानी, महाराज और राजकुमारी को गंधर्व कन्या के रूप में अति सुंदर दिखायी पड़ी । दोनों तालियाँ बजाते हुए ज़ोर-ज़ोर से हँसने लगे । राजदंपति की खुशी का ठिकाना न रहा । क्योंकि अब राजकुमारी के कुरूप होने की समस्या आप ही आप सुलझ गयी । महारानी ने अंगूठी निकालकर बेटी की उँगली में पहना दी ।

दूसरे दिन गंधर्व कन्या वेदचंदना के रूप में खड़ी राजकुमारी को देखकर उसकी सहेलियाँ आपस में कानाफूसी करने लगीं। "यह मनोहर युवती महाराज के रिश्तेदारों में से होगी। लड़की हो तो ऐसी हो। हमारी भी राजकुमारी है, पर क्या फायदा ? इसमें और उसमें आकाश-पाताल का अंतर है।"

राजकुमारी ने सहेलियों के मुख-भावों को भाँपते हुए जान लिया कि वे आपस में क्या बातें कर रही हैं। उसने ठंडी साँस ली और सहेलियों को संबोधित करते हुए कहा "अरी मल्लिका, वसंता। क्या घूर-घूर कर देख रही हो ? क्या मैं कोई नयी हूँ। इधर आना।"

राजकुमारी के कंठ-स्वर को उन्होंने पहचान लिया और अपनी भूल पर क्षमा मांगी। किन्तु राजकुमारी को अब एक नयी चिंता खाये जा रही है। यद्यपि वह दूसरों को अतिसुंदर दिखायी दे रही है पर उसकी आँखों को वही भद्दा स्वरूप दिखायी दे रहा है। जब-जब दर्पण में अपना प्रतिबिंब देखती है तब-तब यह वास्तविकता उसे अशांत कर देती है, उसके मन को झकझोरती है।

इन परिस्थितियों में उसका जन्म-दिन आया। यथावत महाराज ने उस दिन भी विनोद-कार्यक्रमों का प्रबंध किया। आख़िर एक इंद्रजालिक अपने लोगों के साथ अपना इंद्रजाल प्रदर्शित करने आया। उसके साथ उसकी सयानी बेटी भी थी। उसके गले में एक ढोल लटक रहा था।

इंद्रजालिक ने आम की एक गुठली पर टोकरी रख दी और एक छोटे-से दंड को उस टोकरी के चारों ओर घुमाते हुए मंत्र पढ़े। उसकी बेटी ढोल बजाने लगी। थोड़ी देर बाद उसने टोकरी उठा दी। वहाँ दिखायी पड़े , आम की जगह पर आम का एक छोटा-सा पेड़ और उसकी टहनी में अनार का एक फल।

दर्शकों ने तालियाँ बजाते हुए कहा कि यह तो नये प्रकार का इंद्रजाल है। इंद्रजालिक हँसा और कहा "आम के पेड़ में अनार फल पैदा हुआ। महाशयो, चखिये इसका स्वाद।" उसने अनार को टुकड़ों में काटा और पास बैठे कुछ लोगों को दाने दिये।

उन्हें खाते ही "वाह, वाह, अद्भुत, महाअद्भुत। देखने में अनार का फल, पर स्वाद तो अमरूद का।" कहते हुए वे तालियां बजाने लगे। राजा के पास ही बैठे राजकुमारी भी चकित होकर तालियाँ बजाने लगी।

इसके बाद इंद्रजालिक ने कुछ और जादू

दिखाये। अंत में राजा को अपनी बेटी दिखाते हुए उसने कहा ''प्रभु, यह मेरी इकलौती बेटी है। मेरी आँखों को यह नागकन्या की तरह सुंदर लगती है, पर इसकी शादी का प्रयत्न करूँ तो देखनेवाले इसे भद्दी, बदसूरत कहकर भाग रहे हैं। प्रभु, रसज्ञ दर्शको, आप ही देखिये कि मेरी बेटी कितनी सुंदर है।'' कहते हुए उसने मंत्रोच्चारण किया और दंड को उसके सिर पर रखा।

दूसरे ही क्षण इंद्रजालिक की बेटी आँखों को चकाचौंध कर देने वाले वस्त्र पहनकर प्रत्यक्ष हुई। उसके सिर पर साँप के फन के आकार का एक सुवर्ण मुकुट था। वह दर्शकों को बिजली की तरह दिखायी पड़ी।

इंद्रजालिक ने सविनय सिर झुकाकर सबको प्रणाम किया और फिर से अपने दंड के स्पर्श से बेटी को यथावत् बना दिया। फिर कहा ''अब तक मैंने जो भी किया, वे सब सच नहीं हैं। इंद्रजाल-विद्या से सृजित भ्रम मात्र हैं''।

राजा ने इंद्रजालिक की भरपूर प्रशंसा की और हज़ार सोने की अशर्फ़ियाँ भेंट में दीं। मंच पर माता-पिता के बग़ल में बैठी राजकुमारी के हृदय में एक अनिर्वचनीय भाव-संघर्ष प्रारंभ हुआ। प्रदर्शन जैसे ही पूर्ण हुआ, वह एक निर्णय पर आयी और आसन से उतरकर इंद्रजालिक के पास गयी। महिमामयी अंगूठी उसे दी और कहा ''तुम्हें यह मेरे जन्म दिन की भेंट है। इस अंगूठी में तुम्हारे इंद्रजाल के समान की गंधर्वमाया निहित है।'' कहकर वह अंतःपुर लौट गयी।

बेताल ने विक्रमार्क को यह कहानी सुनाकर कहा ''राजन्, कुरूपिणी राजकुमारी को गंधर्व कन्या ने जो अंगूठी भेंट में दी, वह सचमुच वर था। उस अंगूठी की महिमा से किसी सुंदर राजकुमार से शादी करके सुखी
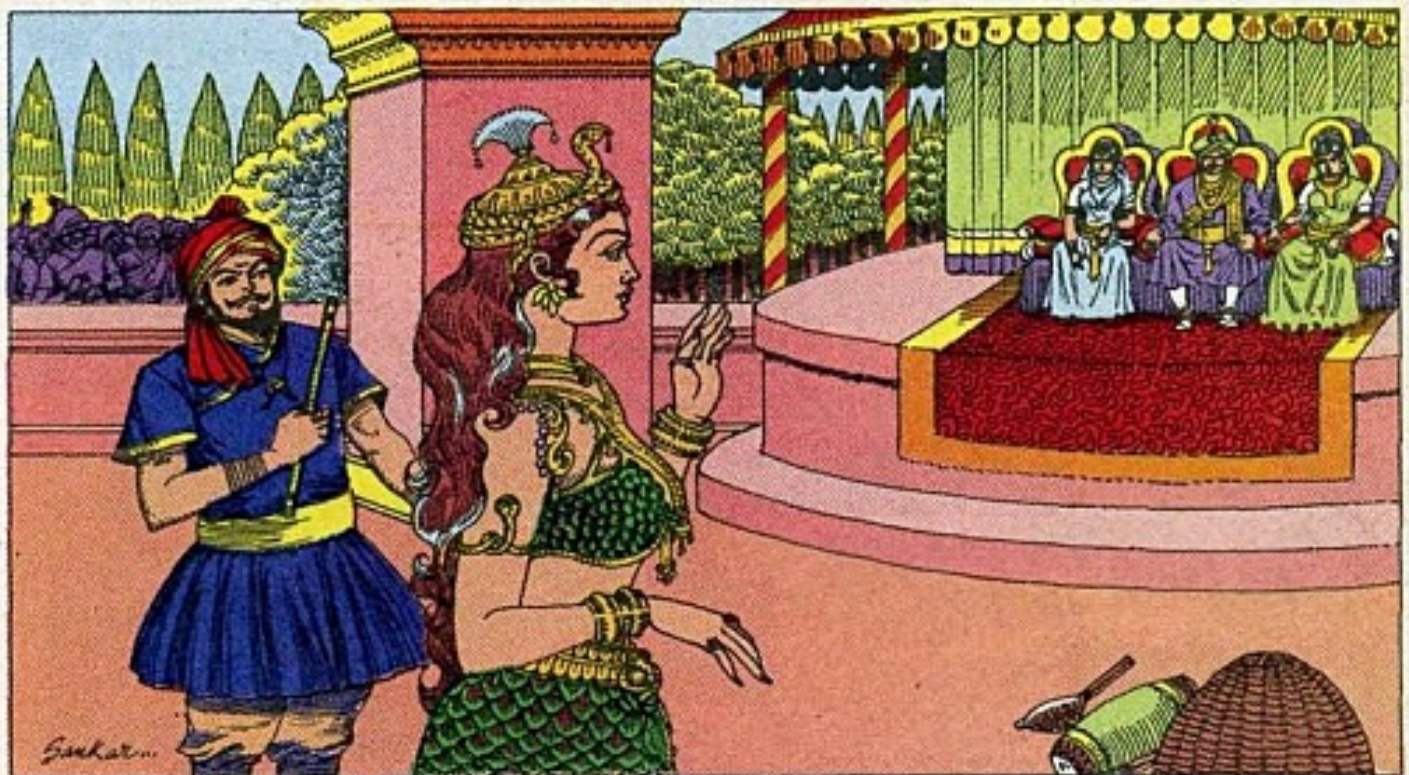
जीवन बिता सकती थी। ऐसा न करके उसने वह अंगूठी इंद्रजालिक को भेंट में दे दिया। उसकी इस चेष्टा को देखते हुए कहना पड़ेगा कि उस क्षण वह अकस्मात् मति-भ्रष्ट हो गयी होगी या किसी भयानक निराशा के गर्त में गिरकर अपने आप को भूल गयी होगी। इसी कारण उसने मूर्खता-भरा ऐसा व्यवहार किया होगा। मेरे इन संदेहों के समाधान जानते हुए भी चुप रह जाओगे तो तुम्हारा सर फट जायेगा।''

विक्रमार्क ने कहा ''गंधर्व कन्या ने, राजकुमारी को जो अंगूठी दी, उसकी महिमाएँ सीमित हैं। राजकुमारी ने इस कठोर सत्य को कभी नहीं भुलाया कि उसके जिस मनोमुग्धकारी रूप को देखकर लोग प्रशंसा कर रहे हैं, वह उसका अपना नहीं है। वह गंधर्व कन्या से प्राप्त उधार मात्र है। अलावा इसके, अंगूठी पहनकर वह मंदिर में जा नहीं सकती, अगर उसने ऐसा किया तो अंगूठी की महिमा शाश्वत रूप से चली जायेगी और उसका कुरूप फूट पड़ेगा। अब रहा, विवाह का विषय। इस विषय में उसकी तथा इंद्रजालिक की बेटी की परिस्थिति में कोई विशेष भेद नहीं। निज जीवन में न ही वह नागकन्या है और न ही राजकुमारी गंधर्व कन्या। एक इंद्रजाल है तो दूसरा गंधर्व माया। इंद्रजाल प्रदर्शन के बाद उसे लगा कि जिस प्रकार अपना पेट भरने के लिये इंद्रजालिक इंद्रजाल कर रहा है, उसी प्रकार मैं भी अपने पति को चुनकर अपने आप को धोखा दे रही हूँ और दूसरों को भ्रम में डाल रही हूँ। वह यों मानसिक संघर्ष में पिस गयी। उसने जान लिया कि मंत्र-तंत्रों अथवा महिमाओं द्वारा प्राप्त किया हुआ सौंदर्य शाश्वत नहीं है और इससे न ही मानसिक सुख मिलता है न ही आनंद। इस तथ्य को जानने के बाद ही उसने अंगूठी इंद्रजालिक को दे दिया। तद्वारा उसने अपने ज्ञान तथा विशाल हृदय का परिचय दिया। यह काम हो सकता है, केवल उन्हीं से, जिनका हृदय निर्मल व पवित्र होता है।''

राजा का इस प्रकार मौन-भंग होते ही बेताल शव-सहित ग़ायब हो गया और पेड़ पर जा बैठा।

आधार -दत्तात्रेय की रचना

दत्तक पुत्र

गाँव की सरहदों के पार, जंगल के समीप ही एक वृद्ध स्त्री अपने बेटे के साथ एक छोटे-से कुटीर में रह रही थी। वह हर दिन जंगल जाती और पलाश के पत्ते और झाड़ू की तीलियाँ लाया करती थी। पलाश के पत्तों से पत्तल बनाती थी। झाड़ू की तीलियों से झाड़ू बाँधती थी। इन्हें बेचकर खाती-पीती थी। कभी-कभी सूखी लकड़ियाँ भी जमा करके लाती थी।

उसका बेटा एकदम निठल्ला था। माँ की सहायता तो करता नहीं था, उल्टे पैसों के लिए उसे तंग करता था। बेकार यहाँ-वहाँ घूमता रहता था। माँ ने उसकी ओर ध्यान देना छोड़ दिया। वह भी ऊब गया और कहीं चला गया।

क्रमश: बूढ़ी की शक्ति क्षीण होती गयी। एक दिन लकड़ियाँ बटोरती-बटोरती बेहोश होकर गिर गयी। उस समय उधर से गुज़रते हुए एक युवक ने उसे देखा। वह तुरंत पास के तालाब से एक पत्ते में पानी ले आया और उसके चेहरे पर छिड़का। थोड़ी ही देर में उसे होश आया।

बूढ़ी ने बैठने के बाद कहा "तुम कौन हो बेटे ?"

"अनाथ हूँ। मेरा कोई नहीं। बचपन में ही माँ-बाप गुज़र गये। इसी आशा को लेकर घूम रहा हूँ कि कहीं कोई मुझे अपना लेगा तो अच्छा होगा।" युवक ने कहा।

बूढ़ी उठकर, लकड़ियों की गठरी उठाकर अपने सिर पर रखने ही वाली थी कि युवक ने उसे रोका और उसे अपने सिर पर ढ़ोते हुए कहा "चलो माँ, मैं तुम्हें घर पहुँचाता हूँ।"

घर पहुँचने के बाद बूढ़ी ने उससे कहा "जब तक तुम्हें रहने के लिए कोई अच्छी जगह नहीं मिलती, मेरे ही यहाँ रहो। इससे

पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

मुझे कोई कष्ट नहीं होगा।''

वह और कहीं नहीं गया। वह बूढ़ी के यहाँ ही रहा। उसके सारे काम करता रहा और वहीं रह गया। बूढ़ी को कोई कष्ट होने नहीं दिया।

बूढ़ी अब कभी-कभी जंगल में पलाश के पत्तों व तीलियों मात्र के लिए जाती रहती थी। शेष सभी काम वह युवक ही करता था। दोनों अपनी-अपनी शक्ति के अनुरूप कमा रहे थे। थोड़ा-बहुत बच भी जाता था।

बूढ़ी का बेटा एक दिन अचानक कहीं से आ टपका। उसने जान लिया कि घर की हालत अब काफ़ी सुधरी है। पैसों के लिए माँ को तंग करने लगा। माँ ने एक पैसा भी देने से इन्कार कर दिया।

बूढ़ी का सगा बेटा दत्तक बेटे से बात-बात पर झगड़ने लगा। उसका विश्वास था कि उस नये युवक को किसी तरह ड़रा धमका कर घर से निकाल दूँ तो माँ उसका आदर करेगी और जब चाहो, पैसे देती रहेगी। एक दिन जब दोनों घर पर नहीं थे, तब बूढ़ी ने सारा धन कहीं छिपा दिया और घर की चीज़ों को तितर-बितर फेंककर ज़ोर-जोर से रोने-धोने लगी।

इतने में बूढ़ी का असली बेटा आया। बूढ़ी ने कहा कि चोरों ने सारा धन लूट लिया। उसने अपनी माँ को गालियाँ देते हुए कहा ''तुम पापिन हो। मैंने पैसे पूछे तो देने से इन्कार कर दिया। अच्छा ही हुआ।

अब जो भुगतना है, भुगतो। तुम्हारी सूरत देखना भी पाप है। अब इस घर में एक क्षण भी नहीं ठहरूँगा।'' कहकर वह तेज़ी से वहाँ से चला गया।

उसके जाने के पहले ही गोद लिया हुआ पुत्र आ गया और जो हुआ, सुना और देखा। उसने बूढ़ी को ढ़ाढ़स बंधाते हुए कहा ''रोना नहीं, माँ। धन जो गया, सो गया। उसके लिए इतनी दुखी क्यों हो रही हो ? आख़िर वह हमारा कमाया हुआ धन ही तो है। फिर मेहनत करेंगे और कमायेंगे।''

''धन कहीं नहीं गया बेटा। पर हाँ, वह निकम्मा घर से चला गया। मेरी सारी तक़लीफ़ें दूर हो गयी। धन सुरक्षित है।'' कहकर उसने वहाँ से धन निकाला, जहाँ उसने छिपाया था।

समुद्रतट की यात्रा – १६

कोरोमंडल के साथ-साथ

कथा : मीरा नायर ◆ चित्र : गोप कुमार

मन्नार की खाड़ी से आगे बढ़ने पर हम पहुंचते हैं कोरोमंडल तट पर. इसका असली नाम *चोळमंडल* था. अंग्रेजी में वह 'कोरोमंडल' बन गया. श्रीमती सरोजिनी नायडू ने अपनी प्रसिद्ध अंग्रेजी कविता *कोरोमंडल फ़िशर्स* में इस नाम को अमर कर दिया है.

कोरोमंडल तट पर अनेक पवित्र धार्मिक स्थल हैं. वेलंकन्नि का गिरजा इनमें अत्यंत प्रसिद्ध है. यह *चर्च ऑफ़ आवर लेडी ऑफ़ हेल्थ* के नाम से जाना जाता है. दूर-दूर से रोगी यहां आते हैं और स्वास्थ्यलाभ के लिए माता मरियम की प्रार्थना करते हैं. स्वस्थ हो जाने पर वे अक्सर अपने शरीर के रोगग्रस्त अवयव की सोने की प्रतिकृति भेंट में चढ़ाते हैं. ये प्रतिकृतियां गिरजे के संग्रहालय में रखी हुई हैं. वर्तमान गिरजे से जरा दूर समुद्र के तट पर मूल गिरजा है. दोनों एक गलियारे से जुड़े हुए हैं, जिसमें बाइबल की कथाएं चित्रित हैं.

वेलंकन्नि का 'चर्च ऑफ़ आवर लेडी ऑफ़ हेल्थ'

वेलंकन्नि से चंद कि.मी. उत्तर में पड़ता है *नागपट्टिनम्.* अब तो यह एक छोटा बंदरगाह है, पर कभी यह बहुत महत्वपूर्ण बंदरगाह गिना जाता था. ५ वीं सदी ई. से यह चोळ राजाओं की नौसेना का अड्डा भी था. अगर आपकी रुचि संगीत में है तो तट से २४ कि.मी. परे तिरुवारूरु अवश्य जाएं. कर्नाटक संगीत के तीन महान वाग्गेयकार त्यागराज, मुत्तुस्वामी दीक्षितर् और श्यामशास्त्री यहीं जनमे थे. तीनों समकालीन थे और 'कर्नाटक संगीत की त्रिमूर्ति' कहलाते हैं.

नागपट्टिनम् से चार कि.मी. उत्तर में *नागोर* है. यहां मुस्लिम

कर्नाटक संगीत की त्रिमूर्ति (बायें से) : त्यागराज, दीक्षितर् और श्यामशास्त्री

संत हजरत मियां की ५०० साल पुरानी दरगाह है. इसके दर्शन करने दूर-दूर से भक्त आते हैं, जो सभी धर्मों के होते हैं. सुनहरे गुंबज और पांच मीनारों से युक्त दरगाह के अहाते में एक कुंड है. उसके पानी में रोग दूर करने की शक्ति बतायी जाती है.

नागोर में ताड़ के पत्तों से टोकरियां, झोले, खाना रखने के डिब्बे और खुलने व बंद होने वाले बीजने जैसी कलात्मक चीजें बनायी जाती हैं.

यहां से उत्तर दिशा में आगे बढ़ने पर हम *कारैकल* पहुंचते हैं. यह भी प्राचीन तीर्थस्थान है और पांडिचेरी राज्य के चार जिलों में से एक का मुख्यालय है.

छठी सदी ईसवी में यहां एक महान संत-गायिका कारैकल अम्मयार् हुईं. वे शिवभक्त थीं. *अरुपुतत् तिरुवंताडि, इरट्टै मणिमालै, मुत्त-तिरुपाटिकंगल्* उनकी प्रसिद्ध रचनाएं हैं.

कारैकल अम्मियार् का विवाह हुआ था. पर जब उनके पति को पता चला कि उनमें दैवी शक्तियां हैं तो उसने उनका परित्याग कर दिया. इससे अम्मियार् को सदमा पहुंचा और वे भक्ति के पद रचते और गाते हुए गांव-गांव घूमने लगीं. उनके पद आज भी बड़ी श्रद्धा के साथ गाये जाते हैं. कारैकल में उनका एक मंदिर भी है.

डेन्सबोर्ग प्रासाद

कारैकल से रवाना हो कर हम लंगर डालते हैं *तरंगंबाडि* या *ट्रैंकिबार* में. कभी यह शहर डेन्मार्क के कब्जे में था. सन १६२० से १८४० तक एशिया में डेन्मार्क का शासन सिर्फ यहां पर था. शहर का मुख्य हिस्सा अब भी लगभग वैसा ही है, जैसा कि डेनिश लोगों ने उसे बनाया था. उनमें से दर्शनीय हैं – डेन्सबोर्ग प्रासाद और दुर्ग, २०० वर्ष पुराना वह द्वार जिसमें से होकर ही शहर में पहुंचा और शहर से बाहर निकला जा सकता है, और यहां के अंतिम डेनिश वाइसराय जोहानेस रेह्लिंग (१८२३-१८४१) का मकान रेह्लिंग्स गार्ड. ये सब तरंगंबाडि के इतिहास की निशानियां हैं. तरंगंबाडि या ट्रैंकिबार भारत के उन स्थानों में से है, जहां यूरोपीय ईसाई मिशनरियों ने सबसे पहले छापेखाने खोले.

तरंगंबाडि के उत्तर में कावेरी के मुहाने पर *पूम्पुहार* स्थित है. यह कभी बड़ा ही समृद्ध बंदरगाह था और इसकी भव्यता का वर्णन संघम् काल के तमिल महाकाव्यों में मिलता है. चोळ राजाओं के समय इसका समुद्री व्यापार म्यांमा (बर्मा), श्रीलंका, मलेशिया, हिंद-चीन और ठेठ चीन के साथ चलता था.

तमिल महाकाव्य *मणिमेकलै* में ऐसी कथा है कि पूम्पुहार में प्रतिवर्ष इंद्रपूजा का उत्सव हुआ करता था. एक साल नगरवासियों ने यह उत्सव नहीं मनाया. समुद्र की देवी मणिमेकलै इस बात से खफा हो गयी और उसने समुद्र में जबरदस्त तूफान उठा दिया. तूफान ने पूम्पुहार शहर और बंदरगाह को लील लिया.

पूम्पहार कलावीथी

पुरातत्वज्ञों ने सन १९६२ में कावेरीपट्टिनम् के निकट किलैयूर के आस-पास खुदाई की. उससे इस बात की पुष्टि हुई कि पूम्पुहार को सचमुच ही समुद्र ने निगल लिया था. बाद में तटवर्ती समुद्र में खोजबीन करने पर पानी के अंदर दो बौद्ध स्तूपों के अवशेष मिले. पूम्पुहार बौद्ध धर्म का केंद्र था. वस्तुतः मणिमेकलै महाकाव्य बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए ही लिखा गया था.

पूम्पहार से हम पहुंचते हैं नटराज की नगरी *चिदम्बरम्* में. नटराज भगवान शिव का नाम है और उनका मंदिर शहर के बीचोबीच स्थित है.

कथा है कि एक बार शिव और पार्वती के बीच इस बात पर विवाद छिड़ गया कि उनमें से अधिक कुशल नर्तक कौन है. उनमें होड़ बद गयी और चिदम्बरम् में स्वर्ग के देवी-देवताओं की उपस्थिति में शिव-पार्वती की नृत्यस्पर्धा हुई. बराबर की जोड़ी थी – कोई दूसरे से न उन्नीस था न बीस. जो कुछ शिव करते उसे पार्वती भी उतनी ही दक्षता से कर दिखातीं; और पार्वती जो कुछ करतीं शिव हूबहू वैसा ही कर दिखाते. अंत में शिव ने योग की एक मुद्रा दरसायी. उन्होंने एक पैर पर खड़े हो कर दूसरा पैर अपने कंधों तक उठा दिया. स्त्रीसुलभ शील और शिष्टाचार के कारण पार्वती वैसा करने को तैयार नहीं हुईं और उन्होंने पराजय स्वीकार कर ली.

मंदिर के आयताकार गर्भगृह में नटराज शिव की जो प्रतिमा है वह इसी नृत्यमुद्रा में है. प्रतिमा पंचधातु यानी पांच धातुओं के मिश्रण से बनी है. गर्भगृह में तांबे और सोने के टाइल जड़े हुए हैं.

हमारा अगला पड़ाव *पांडिचेरी* है, जिसका असली नाम पुदुचेरी है. यह संघीय प्रदेश पांडिचेरी की राजधानी है. बड़ा पुराना और रंगीन इतिहास है इस शहर का. तुमने पढ़ा होगा कि जब हम अंग्रेजों के गुलाम थे तब पांडिचेरी पर फ्रांसीसियों की हुकूमत थी. असल में पश्चिम के देशों से पांडिचेरी का संबंध

नटराज शिव

पहली सदी ई. में ही हो गया था, जब रोमनों ने यहां व्यापार का अड्डा बनाया. उसके सदियों बाद पुर्तगालियों, फ्रांसीसियों, अंग्रेजों और वलंदेजों (डचों) ने यहां व्यापारी कोठियां खोलीं. सन १८१४ में इस पर फ्रांस ने कब्जा कर लिया, जो भारत के स्वतंत्र हो जाने के बाद भी १९५४ तक बना रहा.

योगी श्रीअरविंद

हमारी आजादी की लड़ाई के दौर में समय-समय पर बहुत-से देशभक्तों ने पांडिचेरी में शरण ली थी. महान तमिल कवि सुब्रह्मण्य भारती ने यहां रहते हुए देशभक्ति-भरी अनेक कविताएं रचीं और देश की स्वतंत्रता के लिए काम किया. *कण्णन् पाट्टु, कुइल पाट्टु, पांचाली-शपथम्* जैसे गीतों से भारती ने तमिल साहित्य में नया युग उपस्थित किया. उनके रचे भावपूर्ण गीतों को आज भी तमिलभाषी बड़े प्रेम से गाते हैं. पांडिचेरी के ईश्वरन् धर्मराज कोइल् स्ट्रीट का २० नं. का मकान जिसमें भारती रहा करते थे, अब राष्ट्रीय स्मारक बना दिया गया है.

इस फ्रांसीसी उपनिवेश में शरण लेने वाले एक और महान देशभक्त थे श्रीअरविंद. सन १९२० में वे कलकत्ता से पांडिचेरी आये और १९५० में अपनी मृत्यु तक यहीं आध्यात्मिक साधना और लेखनकार्य करते रहे. *लाइफ़ डिवाइन, सावित्री* तथा गीता, उपनिषदों और वेदों की व्याख्याएं उनकी महत्वपूर्ण रचनाएं हैं.

अरविंद आश्रम आध्यात्मिक साधना का बड़ा केंद्र था. श्रीअरविंद की फ्रांसीसी शिष्या और साधना में उनकी सहयोगी मिरा अल्फासा १९२० में पांडिचेरी आ गयीं और आश्रम का संचालन और साधकों का मार्गदर्शन करने लगीं. वे 'मदर' (श्रीमां) कहलाती थीं. उनका देहांत १९७३ में हुआ.

श्रीअरविंद ने कहा था, ''धरती पर कोई जगह ऐसी होनी चाहिए, जिसे कोई भी राष्ट्र अपनी मिल्कियत न कह सके और जहां पर सभी सद्भावनाशील और सदाकांक्षी मनुष्य परम सत्य रूपी एकमात्र अधिकार के बूते पर विश्व-नागरिकों के रूप में स्वतंत्रतापूर्वक जी सकें.'' उनके इस सपने की पूर्ति के लिए १९६८ में पांडिचेरी से ८ कि.मी. दूर *ऑरोविल* की स्थापना की गयी, जिसके नाम का अर्थ है — *उषा नगर.*

ऑरोविल का मातृमंदिर

कोल्हू का बैल

चपलपुर का चरण अपने रिश्तेदारों को बहुत चाहता और मानता था। उसकी पत्नी अरुणा भी घर आये अतिथियों का हृदयपूर्वक आदर-सत्कार करती थी। इन दोनों की खूब तारीफ़ करते थे उनके रिश्तेदार।

बंधुप्रीति में ही नहीं बल्कि चरण बातें करने में भी पटु था। बहुत-से लोगों का कहना था कि उससे बातें करते हुए समय का पता ही नहीं चलता। उसकी बातों में खो जाने में आत्मतृप्ति मिलती है।

उमापति उग्रनगर का निवासी था। वह धनी था, पर वह कभी भी अपने गाँव से बाहर जाने का नाम ही नहीं लेता था। उसका दावा था कि उसकी माँ से बढ़कर कोई और महान नहीं और उग्रनगर से बढ़कर कोई उत्तम गाँव है ही नहीं। बहुत समय तक उसे कोई लड़की अच्छी नहीं लगी, इसलिए उसकी शादी में काफ़ी विलंब हुआ। उसकी पत्नी करुणा सुँदर, चुस्त, अक़्लमंद और स्वभाव से अच्छी स्त्री थी।

महीने भर में करुणा अपने पति के बारे में सब कुछ जान गयी। हाँ, अवश्य ही उसे कुछ विषयों का ज्ञान है, जिन्हें बार-बार दुहराता रहता है। पर कोई नये विषय जानने की इच्छा नहीं रखता। अपने को बड़ा मानकर अपनी ही तारीफ़ करता रहता है। औरों के सद्‌गुणों की कभी प्रशंसा नहीं करता उल्टे उनका अपमान करता रहता है।

करुणा को लगा कि पति गाँव छोड़कर बाहर हो आये, तभी उसमें सांसारिक ज्ञान बढ़ेगा। चरण दूर का रिश्तेदार है। रिश्ते में भाई लगता है। उसने पति के साथ चरण के यहाँ जाने का निश्चय किया। उसकी दृष्टि में वही उमापति को सुधारने की शक्ति रखता है। एक दिन उसने अपने पति से कहा कि चलिये, चरण के घर हो आयेंगे। उमापति ने

मारुती व्यास

आने से इनकार कर दिया।

"चपलपुर, उग्रनगर से हज़ारों गुना अच्छा और सुँदर गाँव है। वहाँ मेरा चचेरा भाई चरण रहता है। कहते हैं कि दुनिया की बातें जितना वह जानता है, कोई और नहीं जानता। हम वहाँ जाएँगे तो मालूम हो जायेगा कि तुम दोनों में से कौन बड़े हैं।" यों करुणा ने पति को उकसाया।

उमापति में रोष भर आया और दूसरे ही दिन पत्नी के साथ चपलपुर निकला।

उमापति दंपति का आदर-सत्कार चरण व अरुणा ने बड़े प्यार से किया। अतिथियों के लिए अरुणा ने ख़ास खीर बनायी। करुणा ने उस खीर की स्वादिष्टता की खूब तारीफ़ की।

किन्तु उमापति ने अपनी अप्रसन्नता प्रकट करते हुए कहा "खीर बनाने के लिए भैंस का गाढ़ा दूध चाहिये। उसमें उग्रनगर का काजू डालना चाहिये। फिर मेरी माँ वह खीर बनाये तो उसके स्वाद का क्या कहना। जिसने उसका स्वाद चखा, उसे कोई भी खीर, खीर ही नहीं लगेगी।" उसकी बातों से अरुणा को दुख हुआ। किन्तु चरण ने बात बदलते हुए कहा "लगता है, बहनोईजी हमें उग्रनगर बुला रहे हैं। हम उग्रनगर आयेंगे तो केवल खीर तक ही सीमित नहीं रहेंगे। सासजी के हाथों बने अनेकों प्रकारों के पकवान चखेंगे।"

उस रात को चरण ने अतिथियों के लिए मुलायम बिस्तरों का इंतज़ाम किया। उमापति ने उनकी तारीफ़ नहीं की। उल्टे कहा "गर्मी के दिनों में ऐसे बिस्तरों से सुख की नींद मिलती। हमारे गाँव में एक नये प्रकार की कपास मिलती है, जो शरीर को ठंडक पहुँचाती है।" करुणा ने देखा कि इस बार अपने पति की बातों से चरण को भी सदमा पहुँचा। उसने भाई को अलग बुलाया और अपने पति के दुर्गुणों के बारे में बताया। उसने कहा "तुम तो दूसरे की त्रुटियों की भी प्रशंसा करते हो। मेरा पति तो बारंबार दूसरे का अपमान करता रहता है। आदमी तो अच्छा है, पर क्या करूँ? उसके इस दुर्गुण के निर्मूलन के लिए यहाँ उसे ले आयी। तुम ही कोई उपाय सोचो।"

"अच्छा हुआ, तुमने यह बात पहले ही बता दी। अब देखना, मैं क्या चमत्कार कर दिखाता हूँ।" चरण ने कहा।

दूसरे दिन सबेरे चरण ने, उमापति से इसी गाँव में रहनेवाले अपने रिश्तेदार मुकुंद

के बारे में बताया।

मुकुंद ने अपनी बेटी की शादी करायी। चरण ने पाँच सौ अशर्फ़ियाँ दीं और यों उसकी मदद की। मुकुंद का घर गिर गया तो चरण ने उसे बासें दीं और फिर से घर बनाने में मदद पहुँचायी। मुकुंद ने चरण से कितनी ही मददें पायीं, पर मुकुंद, चरण की प्रशंसा में एक भी बात मुँह से नहीं निकालता, उल्टे उसके विरुद्ध दुष्प्रचार करता रहता है।

दोनों मुकुंद के घर गये। मुकुंद ने चरण की परवाह किये बिना उमापति से ही बातें कीं। चरण ने बड़े ही आदर के साथ उससे बातें करने की कोशिश की, पर वह फटकारते हुए बोला "कल बैलों की जोड़ी खरीदने वाला हूँ। पच्चीस अशर्फ़ियों की कमी पड़ेगी। बहाने न बनाना। रक़म तैयार रखना। कल आकर ले लूँगा।"

वहाँ से निकलने के बाद चरण ने उमापति से कहा "तुम्हीं बताओ, ऐसे कृतघ्न से कैसा व्यवहार करूँ?"

उमापति ने सोचकर कहा "मुकुंद को देखते ही अपने गाँव के गोविंद की याद आयी। मैंने मुकुंद और उसकी बातों को भुला दिया और अपने गोविंद के बारे में ही सोचता रहा। तुम जैसे आदमियों ने गोविंद के बारे में मुझसे शिकायतें कीं। किन्तु मुझे तो गोविंद की व्यवहार-शैली में कोई त्रुटि नज़र नहीं आयी। वह मुझसे अच्छी तरह से पेश आता है। मुझे लगता है कि तुम्हें मालूम नहीं कि आदमियों से कैसे पेश आना चाहिये। मेरी माँ ने ही मुझे सिखाया कि आदमियों से कैसा बरताव करना चाहिये। सब मुझे चाहते
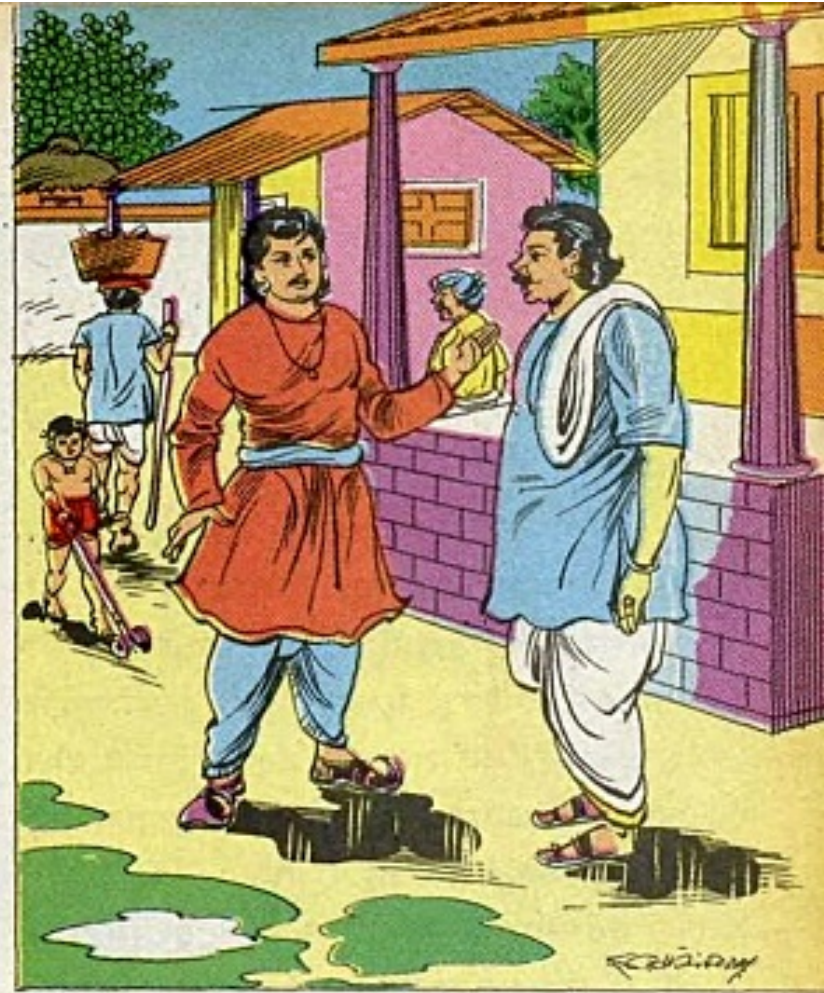
हैं। किसी के साथ मेरा कोई झगड़ा नहीं।"

चरण ने उमापति को अच्छा उपाय बताने पर धन्यवाद दिया। "मैंने उपाय बताया! ऐसा मैंने क्या बताया?" उमापति ने आश्चर्य-भरे स्वर में पूछा। "दूसरों से तुम जैसा बरतते हो, उसी तरह का बरताव मुझे मुकुंद से करना होगा। तब किसी प्रकार की समस्या नहीं होगी। यही था न तुम्हारा बताया उपाय?" चरण ने पूछा।

उमापति क्षण भर के लिए सकुचाता रहा, पर फिर अपने को संभालकर बोला "हाँ, हाँ, तुमनें ठीक कहा।"

इसके बाद चरण ने, उमापति को अपने गाँव के आम के बाग़ों को दिखाते हुए कहा "यहाँ पशु-ग्रास से खाद बनाते हैं। इस खाद के कारण यहाँ के आमों का स्वाद

वर्णनातीत है ।'' ''कहते हैं कि पशु-ग्रास की खाद से शरीर में ज़हरबाद उभर आते है । इसीलिए हमारे गाँव में रासायनिक खाद का उपयोग करते हैं । रुचि भी होती है और साथ ही सेहत के लिए भी अच्छा है ।'' कहकर उमापति ने चरण की बातों का खंडन किया ।

चरण वहाँ से उसे कपड़ों की दुकान में ले गया । मंदिर दिखाया । गाँव में जो-जो ख़ासियतें हैं, दिखायीं । उमापति ने कोई भी जगह ठीक तरह से नहीं देखी । करुणा ने सब स्थलों की सराहना की, पर उमापति बार-बार अपने गाँव की विशिष्टताओं को ही बढ़ा-चढ़ाकर कहता रहा ।

एक सप्ताह बीत जाने के बाद उमापति पत्नी समेत लौट पड़ा । निकलने के पहले करुणा ने, चरण दंपति को अपनी कृतज्ञता व्यक्त की और उनकी अतिथि-मर्यादा की प्रशंसा करते हुए कहा ''आपका आतिथ्य सराहनीय और रुचिकर है । आप लोगों की आत्मीयता अविस्मरणीय है । आपका गाँव अद्‌भुत है । यहाँ आकर मैं धन्य हुई ।''

तब चरण ने थोड़ी दूर खड़े उमापति को देखते हुए कहा ''अपने पति से भी ये बातें बताओ । फिर एक और बार आना, अपने पति के साथ । भूलना मत ।''

करुणा ने चकित होकर पूछा ''यह क्या कह रहे हो । वे भी मेरे ही साथ आये हैं ।''

चरण ने ज़ोर से हँसते हुए कहा ''सच! क्या वह तुम्हारे ही साथ आया? मुझे तो किसी भी क्षण ऐसा नहीं लगा कि वह उग्रनगर की सरहदों को पार करके आया ।''

उमापति ने ये बातें सुनीं और एकदम हक्का-बक्का रह गया । उसने अब यह सत्य जान लिया कि चूँकि उसे सदा उग्रनगर की ही याद रहती है, अतः चंपलपुर आकर भी यहाँ उसने कुछ न जाना, कुछ न देखा । यहाँ आकर भी न आने के बराबर है ।

इसके बाद जहाँ कहीं भी उमापति जाए, वहाँ अपने गाँव या अपनी बातें कम करता और हमेशा दूसरों से नयी-नयी बातें जानने अथवा सीखने की उत्सुकता दिखाता । उसने यह अपनी आदत भी बना ली । पति में आये इस परिवर्तन को देखकर करुणा खुश हुई । मन ही मन भाई चरण को धन्यवाद देती रही ।

सुवर्ण रेखाएँ - १०

१. ... बरफ़ से ढका यह ज्वालामुखी कहाँ है? उस देश की प्रजा इसे पवित्र मानती है। इसकी ऊँचाई है ३,७७५ मीटर। संसार भर में यही एक पर्वत है, जिसके फ़ोटो अधिकाधिक लिये गये।

दुनिया में इन्हें कहाँ देख सकते हैं ?

२.... श्वेड्यागन कहाँ है?
इस स्तूप को स्वर्णपगोडा भी कहते हैं। ८,८६८ पतले सुवर्ण चद्दरों से ढका हुआ है। यह चमकता हुआ बौद्ध-मंदिर है।

३. ...बिग बेन कहाँ है ?
यह संसार में सुप्रसिद्ध घडियाल है। कुछ लोगों का कहना है कि जिस आदमी ने इस घंटे को लटकाने के काम का पर्यवेक्षण किया, उसके नाम पर इसका यह नाम पड़ा है। कुछ और लोगों का कथन है कि एक सुप्रसिद्ध बाक्सर के नाम पर यह नाम रखा गया।

४. .... लंबी पूँछ की, रोमों से भरे सस्तन जंतु को क्या लेमूर कहते हैं? कुछ लेमूर बंदर के आकार के होते हैं। कुछ और छोटे-से चूहों की तरह और गिलहरियों की तरह होते हैं।

५. ... सबसे बड़ा मानव द्वारा निर्मित अगाध ?
१८७१ में यहाँ वज्र पाये गये। तब से १९१५ तक यहाँ खुदाई हुई। तब २३ मिलियन टन की

गीली मिट्टी व पथ्थरों को खोदकर बाहर निकाला। २.७ टन के वज्र भी खोद निकाले। इससे भूमि में बड़ा ही अथाह (क्राटर) बना।

कुशाग्र बुद्धि तथा सुनिश्चित मेधाशक्ति के लिए सुप्रसिद्ध बड़े से बड़े जासूस भी कभी-कभी गलतियाँ कर बैठते हैं। क्या आप बता सकते है कि षेलकि होम्स ने यहाँ कैसी ग़लती की?

मिस्टर होम्स, तुमने ग़लती की

क्रिसमस के दूसरे ही दिन सबेरे मैं अपने मित्र षेलकि होम्स से मिलने गया। बैंगनी रंग के कपड़े पहनकर सोफे में बैठे, मुँह में पैप रखे, दैनिक समाचार-पत्रों को पलट रहा था वह। बगल में ही काठ की बनी कुर्सी थी। उसी के पीछे मैली और फटी टोपी लटक रही थी। पास ही दूरबीन और कुछ वस्तुएँ रखी हुई थीं। मुझे लगा कि उस टोपी का परिशीलन करने के लिए मेरे मित्र ने उसे वहाँ लटकाया।

''तुम्हारे काम में कहीं रुकावट तो नहीं डाल रहा हूं'' कहते हुए मैंने अंदर प्रवेश किया।

''ऐसी कोई बात नहीं। इस बात की मुझे खुशी है कि मेरे परिशोधनों के फलों के संबंध में चर्चा करने के लिए सही समय पर मेरा मित्र आया हुआ है। बात तो बिलकुल मामूली है। पर इसमें कुछ दिलचस्प बातें निहित हैं।'' होम्स ने कहा।

''अच्छा''

''तुम कमीशनर पीटर्स को जानते हो न?''

''जानता हूँ।''

''यह उन्हीं से संबंधित है।''

''क्या वे यह टोपी पहनते थे?''

''नहीं। उन्होंने ही इसे खोज निकाला। मालूम नहीं, इसका मालिक कौन है?''

''मालिक कौन है, यह जानने कोई संकेत मिला?''

''इसी से उस संकेत को खोज निकालना होगा।''

''इस टोपी से?''

''हाँ''

''इस पुरानी टोपी से क्या मालूम हो पायेगा?''

उसने टोपी हाथ में ली और इधर-उधर उसे घुमाते-फिराते हुए ध्यान से देखते हुए कहने लगा ''यह निश्चित है कि इसे पहननेवाला अवश्य ही अक़्लमंद है।''

''होम्स, मज़ाक कर रहे हो क्या? मैं क्या इतना बुद्धिहीन हूँ। मेरी समझ में बिलकुल नहीं आ रहा है कि तुम कहना क्या चाहते हो। तुम कैसे बता सकते हो कि यह टोपी पहननेवाला बड़ा ही अक़्लमंद है।'' मैंने पूछा।

उस प्रश्न के समाधान के रूप में होम्स ने वह टोपी अपने सिर पर रख ली। वह उसके माथे से फिसली और नाक पर आकर रुक गयी।

''ऐसे बुद्धिमान के मस्तिष्क में अवश्य ही कुछ न कुछ तो होगा ही'' उसने कहा।

(कानन डायल से रचित 'दि ब्लू काबंकुल' से)

एक रेड इंडियन देख रहा था कि कुछ यूरोपियन अपने तट पर उत्तर रहे हैं। इस चित्र में एक बड़ी भूल है। वह भूल क्या है?

विदेशी जब अपने तट पर आये थे

कूट प्रश्न

१. नीचे दिखाया गया चित्र १. पेरट मछली २. बिज्लर ३. आर्चर मछली

२. पानी पर लेटकर यह युवक पुस्तक पढ़े जा रहा है। वह जहाँ लेटा हुआ है, वह पानी से भरा हुआ तालाब है, जिसमें दुनिया का सबसे अधिक नमक है। उसका नाम (अ) कास्पियन समुद्र (आ) मृत समुद्र (इ) टारेन्स तालाब

३. किस देश को सूचित करनेवाला यह नक़्शा है? (अ) स्पैन (आ) फ्रान्स (इ) पोर्तुगल

तस्वीर खींचना सीखिये................

सुवर्ण रेखाएँ - ९ के उत्तर

दुनिया में कहाँ?

१. कोला रीछ केवल आस्ट्रेलिया में हैं।

२. समुद्र-कन्या की मूर्ति कोपेनहोगन हार्बर के मुखद्वार पर है।

३. टुत्साड्स वाक्स संग्रहालय लंदन में है।

४. सुवर्ण द्वार की पुल को पार करना हो तो अमेरिका का शानफ्रान्सिस्को जाना होगा।

प्रश्नावली के उत्तर

१. तीनों ने समान रूप से बाँट लिया, इसलिए एक-एक रोटी के तीन-तीन टुकड़े किये होंगे। कुल मिलाकर २४ टुकड़े। एक-एक ने आठ-आठ टुकड़े खाये। पाँच रोटियों के मालिक ने पंद्रह टुकड़ों में से (१५-८) मुसाफ़िर को दिया। तीन रोटियों के मालिक ने (९-८) टुकड़े मुसाफिर को दिया। इसलिए सात टुकड़े देनेवाले को चाँदी की सात अशर्फ़ियाँ, एक टुकड़ा देनेवाले व्यापारी को चाँदी का एक सिक्का मिलना चाहिये।

२. तब वर्षा नहीं थी।

३. जो सब करते हैं, वही वे भी करेंगे। फेंक देंगे।

४. पाँच अड्डे।

५. खाली सफ़ेद रूमाल के कोने को लाल रूमाल के कोने से बाँधना चाहिये।

६. चाबुक। उसकी नोक शब्द से भी तीव्र चलती है।

७. गिलास, वह पानी से नहीं बल्कि किसी और द्रव से भरा हुआ है।

८. पाँचवें दिन पानी गिरा। अब और आठ दिन बाकी हैं। किन्तु इससे किसी को कोई तक़लीफ नहीं पहुँची। इसका यह मतलब हुआ कि गिरा हुआ आठ लीटरों का पानी मृत व्यक्ति के हिस्से का है।

९. बलवंत शर्मा ने बायाँ हाथ उठाया-बायाँ हाथ। उस दायें हाथ को नहीं, जिसे चोट लगी।

शकुनि ने भाँप लिया कि पाँडवों का वृत्तांत सुनने के बाद धृतराष्ट्र को अपनी अकर्मण्यता पर बड़ा ही पछतावा हुआ और कौरवों के भविष्य को लेकर उसे भय भी लगने लगा। उसने यह विषय कर्ण को बताया। दोनों ने दुर्योधन से धृतराष्ट्र की मनोस्थिति सविस्तार बतायी। अब दुर्योधन यह सब जानकर चिंताग्रस्त हो गया।

तब कर्ण ने दुर्योधन से कहा ''राजन्, चिंता तो पांडवों को होनी चाहिए, जो तुम्हारी समझदारी के कारण जंगलों में अनेकों कष्ट झेल रहे हैं। तुमने उनका राज्य भी उनसे छीन लिया और समस्त सुख भोग रहे हो। फिर तुम्हें चिंता किस बात की? सुना कि पांडव अब द्वैतवन में हैं। यह अच्छा अवसर है। उन्हें तुम अपना वैभव प्रदर्शित करोगे तो वे ईर्ष्या से जल उठेंगे। वे अपनी अशक्तता पर रोयेंगे। तुम्हारे अंतःपुर की रानियों के ऐश्वर्य को देखकर द्रौपदी मन ही मन अपने अभाग्य पर दुखी होगी।''

शकुनि ने कर्ण का समर्थन किया। कहा कि कर्ण की बातें तुरंत अमल में लायी जाएँ। दोनों की बातों को ध्यान से सुनने के बाद दुर्योधन ने कहा ''तुम दोनों की बातें मुझे सही लगीं। परंतु मेरा संदेह है कि पिताश्री क्या हमें द्वैतवन जाने देंगे? तुम्ही लोगों ने अभी-अभी कहा था कि वे पांडवों की दुस्थिति पर बहुत ही दुखी हैं। अतः कोई ऐसा उपाय निकालिये, जिससे हम द्वैतवन जा सकें और पांडवों की दुस्थिति इन आँखों देख सकें, साथ ही उन्हें अपना वैभव दिखा सकें। दुःशासन से भी इस संबंध में बातें कीजिये और कल सुबह तक अपना निर्णय मुझे सुनाइये। भीष्म पितामह को भी अपनी सम्मति देनी होगी, तभी हमारा वहाँ जाना संभव होगा। कोई ऐसा मार्ग ढूँढ़िये, जिससे

वे दोनों हमारी यात्रा में कोई विघ्न ड़ाल न सकें ।''

दूसरे दिन शकुनि व दुःशासन की उपस्थिति में कर्ण ने दुर्योधन से कहा ''हमारे पशुवों का झुंड द्वैतवन में है । उनकी रक्षा का भार तुम्हारे कंधों पर है । इसलिए अगर हम यह कहें कि इस कर्तव्य की पूर्ति के लिए हम द्वैतवन जानेवाले हैं तो मैं समझता हूँ कि उस वृद्ध राजा को कोई आपत्ति नहीं होगी । हम बड़े ही ठाठ-बाट से द्वैतवन जाएँगे और पांडवों को आश्चर्य में डुबो देंगे ।''

सबने तालियाँ बजायीं और कर्ण की अक़्लमंदी की भरपूर प्रशंसा की । उन्होंने समंग नामक पशुपालक को बुलाया और कहा ''तुम हमारे साथ आओ और महाराज से कहो कि हमारे पशु द्वैतवन में हैं ।''

वह पशुपालक उनके कहे अनुसार ही उन दुष्टचतुष्टय के साथ-साथ धृतराष्ट्र के पास आया और कहा ''महाराज, हमारे पशु-गण अब द्वैतवन में हैं । वहाँ चरने के लिए हरी घास है । ऐसे तो वे वहाँ अब सुरक्षित हैं, पर भविष्य में क्रूर मृगों का भय है । उनकी रक्षा का प्रबंध आवश्यक है । यही बात आपसे निवेदन करने आया हूँ ।''

तब कर्ण और शकुनि ने धृतराष्ट्र से कहा ''दुर्योधन स्वयं वहाँ जाए और उनकी रक्षा का भार संभाले तो उत्तम होगा । वहाँ जाकर क्रूर मृगों का शिकार कर सकता है और हमारी पशु-संपदा की रक्षा कर सकता है । उनके पाल-पोषण में सुधार भी ला सकता है ।''

धृतराष्ट्र ने कहा ''पशु-समूह की रक्षा के लिए जाने का प्रस्ताव समुचित है, परंतु अब द्वैतवन जाना मुझे सही नहीं लगता । जुएँ में हारकर पांडव वहीं बनवास कर रहे हैं । तुम लोग वहाँ जाओगे तो अवश्य ही कोई न कोई बखेड़ा खड़ा कर दोगे । हो सकता है, तुम्हारी कोई त्रुटि न हो, पर तुम लोगों पर कीचड़ उछाला जाएगा और तुम्हारी अपकीर्ति होगी । शेष पांडवों से भयभीत होने की कोई आवश्यकता नहीं, परंतु भीम प्रतीकार लेने के लिए सन्नद्ध बैठा है । द्रौपदी भी ऐसे ही अवसर की प्रतीक्षा में है । तुम लोग भी बहुत ही उतावले स्वभाव के हो । किसी न किसी विवाद में फँसना तुम्हें अच्छा लगता है । अगर तुम दोनों में झगड़े हो जाएँ तो तुम लोगों का ही नष्ट होगा । हाल ही में अर्जुन स्वर्गलोक गया और दिव्यास्त्र ले आया । तुम

उसकी बराबरी के नहीं हो। अतः मेरी राय है कि पशु-रक्षा के लिए तुम लोग वहाँ मत जाना। किसी और को भेजना।"

शकुनि ने धृतराष्ट्र से कहा "हम आपको आश्वासन दिलाते हैं कि हम वहाँ कोई उपद्रव नहीं मचाएँगे। हम वहाँ जायेंगे ही नहीं, जहाँ पांडव रहते हैं। थोड़े दिनों तक वन-विहार करेंगे, पशु-संपदा की रक्षा करेंगे और लौटेंगे। पांडव भी धर्मराज की खींची लकीर पार नहीं करेंगे और हमसे झगड़ा मोल नहीं लेंगे। आप से तो यह बात छिपी नहीं है कि धर्मराज सच्चे अर्थों में धर्ममूर्ति है।"

धृतराष्ट्र ने उसकी बातों का विश्वास किया और कहा "अच्छा, हो आओ।" दुर्योधन के आनंद की सीमा न रही। कर्ण, शकुनि, दु:शासन और कितने ही नागरिकों व उनकी पत्नियों को साथ लेकर दुर्योधन घोष यात्रा पर निकल पड़ा। हज़ारों रथ, घोड़े, हाथी, सेना, आखेटक, भाट आदि उनके साथ-साथ गये। गाड़ियों में वस्तु-समाग्री लादी गयी।

कुछ दिनों में वे सब द्वैतवन पहुँचे। शिबिरों का प्रबंध हुआ। उन्होंने पशु-गणों का निरीक्षण किया। गायों, बैलों व साँडों को अलग-अलग किया। उनपर निशान लगाया। पशु-पालकों को कुछ सूचनाएँ दीं। उन्हें भेंटें दीं और उनसे आयोजित विनोद-कार्यक्रमों में भाग लिया। आवश्यक दूध, दही, मक्खन शिबिरों में लाये गये। शिकारी, शिकार करके माँस ले आये। दुर्योधन रानियों, पुत्रों व मित्रों को लेकर वनविहार करने लगा। वन-सौंदर्य को देखकर बहुत ही आनंदित हुआ। द्वैतवन के बीच स्थित सरोवर के पास

आये और उसके किनारे रहने का निश्चय किया।

उसी सरोवर के दूसरे किनारे पर धर्मराज का आश्रम है। जब दुर्योधन वहाँ पहुँचा तब धर्मराज ब्राह्मणों की सहायता से सद्यस्क नामक यज्ञ करने के लिए आवश्यक तैयारियाँ कर रहा है।

दुर्योधन की आज्ञा के अनुसार उसके सेवक सरोवर के किनारे कुटीर-निर्माण के कामों में लग गये। तब सरोवर के रक्षक गंधर्वों ने उन्हें रोका और कहा "हमारे प्रभु की आज्ञा है कि यहाँ किसी को रहने न दिया जाए। किसी और स्थल पर जाओ और रहने का प्रबंध कर लो।"

सेवकों ने जब यह बात दुर्योधन से बतायी तो वह एकदम बौखला उठा। उसने बड़े ही

गर्व से अपने सैनिकों को आज्ञा दी कि गंधर्व वहाँ से खदेड़े जाएँ। उन्होंने वहाँ जाकर गंधर्वों से कहा "महाराज दुर्योधन यहाँ विहार कर रहे हैं। तुम लोग यहाँ से चले जाओ, नहीं तो तुम्हारी जान की ख़ैर नहीं।"

इसपर गंधर्व हँस पड़े और बोले "तुम किसे ड़राना चाहते हो? हमें तुम्हारी या तुम्हारे महाराज की परवाह नहीं है। हमारे प्रभु हैं गंधर्व राजा चित्रसेन। चुपचाप यह जगह ख़ाली करो और दूसरे किनारे पर अथवा धर्मराज के आश्रय के बग़ल में चाहो तो तंबू तानो। यह हमारे महाराज का विहार-स्थल है। यहाँ हमारी अनुभूति के बिना कोई कुछ नहीं कर सकता।"

यह समाचार पाकर दुर्योधन के क्रोध का आर-पार न रहा। उसने दंभ-भरे स्वर में कहा "मुझे आज्ञा देनेवाले ये गंधर्व कौन होते हैं? शायद वे जानते नहीं होंगे कि हम कौरव कितने बलवान हैं। उनसे कहना कि हमारी आज्ञा अमल में न लायी जाए तो उनका संहार निश्चित है।" तक्षण ही उसने अपनी सेनाओं को गंधर्वों से लड़ने के लिए भेजा।

गंधर्वों ने चित्रसेन की अनुमति पाकर दुर्योधन की सेना को तहस-नहस कर दिया। कर्ण दूर खड़ा यह सब कुछ देख रहा था। दुर्योधन की प्रशंसा पाने के उद्देश्य से वह गंधर्वों पर टूट पड़ा और कुछ गंधर्वों को मार भी ड़ाला। किन्तु इतने में हज़ारों की संख्या में गंधर्व सैनिक आये और कर्ण को घेर लिया। कर्ण को घिरा हुआ देखकर कौरव राजकुमार उसकी सहायता करने रणक्षेत्र में कूद पड़े। छोटे-से झगड़े ने अब लड़ाई का रूप धारण किया। चित्रसेन स्वयं युद्धक्षेत्र में आ पहुँचा।

चित्रसेन ने जब मायायुद्ध का प्रारंभ किया, तब दुर्योधन के सैनिक भाग गये। दुर्योधन के भाई उन्हें रोकने के प्रयत्नों में लग गये। केवल कर्ण मात्र निर्भीक होकर गंधर्वों से लड़ता रहा। किन्तु गंधर्वों ने उसके रथ के टुकड़े-टुकड़े कर दिये। कर्ण निरथ होकर, विकर्ण के रथ में बैठकर भाग गया। दुर्योधन गंधर्वों के हाथों बंदी हो गया। पर चित्रसेन ने दुर्योधन को नहीं मारा। उसे रस्सियों से बाँध दिया। शेष गंधर्वों ने दुर्योधन के भाइयों और उनकी पत्नियों को पकड़ा और उन्हें भी बाँध दिया। अब सबके सब कौरव गंधर्वों के बंदी हैं।

अपने सब लोगों को क़ैदी बनाकर जब गंधर्व ले जा रहे थे तो कुछ कौरव सेनाधिपति धर्मराज के पास दौड़े-दौड़े आये और कहा

"महात्मा, कौरव राजकुमारों व उनकी पत्नियों को बंदी बनाकर गंधर्व गंधमादन प्राँतों की ओर ले जा रहे हैं। आप ही उनकी रक्षा कर सकते हैं।"

भीम ने उनकी बातें सुनकर हर्षित होते हुए कहा "गंधर्वों ने ठीक ही किया। जो होना चाहिये था, वही हुआ। अपने बल पर दंभ भरनेवाले कर्ण को गंधर्वों ने अच्छा पाठ सिखाया। अब हमें उच्च स्तर पर सेनाएँ जुटाने की आवश्यकता भी नहीं रह गयी। कष्टों में पड़े अच्छे लोगों की भगवान यों सहायता करते रहते हैं।"

धर्मराज ने भीम को डाँटते हुए कहा "क्या ऐसी बातें करने का यह समय है? कौरव अब हमारी शरण में आये हैं। उनकी रक्षा करना अब हमारा धर्म है। हमारे ही भाइयों की पत्नियों का अपमान हो रहा है, तो क्या यह हमारा अपमान नहीं हुआ? मैं यज्ञ की दीक्षा में हूँ। अतः तुम अर्जुन, नकुल, सहदेव तथा अपने लोगों को ले जाकर गंधर्वों का पीछा करो और कौरवों की पत्नियों को छुड़ावो। कहीं गंधर्वों से लड़ने पर तुल न जाना। जहाँ तक हो सके, उन्हें समझावो, उनसे मीठी-मीठी बातें करो और अपना कार्य सफल करो। अगर ऐसा संभव नहीं हो पाया तो युद्ध करो। एक बात अच्छी तरह से याद रखना। हमारे ही बीच युद्ध छिड़ जाए तो वे सौ के सौ हैं और हम केवल पाँच। परंतु बाहर का कोई शत्रु हमपर टूट पड़े तो हम कुल एक सौ पाँच हैं।"

अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव ने धर्मराज को वचन दिया कि वे उनकी आज्ञा का पालन

करेंगे और कौरवों की पत्नियों को अवश्य ही छुड़ाएँगे। वे सब रथों में बैठकर उसी दिशा में त्वरित गति से गये, जिस दिशा में गंधर्व गये थे। कौरव सैनिकों ने अब ठंडी साँस ली।

गंधर्वों ने जब जाना कि पांडव उनका पीछा कर रहे हैं, तो वे रुक गये। अर्जुन ने उनके पास आकर कहा "ओ गंधर्वो, जिस दुर्योधन को आप पकड़कर ले जा रहे हैं, वह हमारा भाई है। आप तुरंत उसे छोड़ दीजिये। यह हमारे अग्रज धर्मराज की इच्छा है।"

"देवेंद्र की आज्ञा का पालन किया हमने। उनकी आज्ञा का पालन करना हमारा धर्म है" गंधर्वों ने कहा।

"स्त्रीयों को बंदी बनाकर ले जाना गंधर्व राजा को शोभा नहीं देता। यह अनुचित भी है। हमारी बात मानिये और दुर्योधन आदि

को तथा उनकी पत्नियों को छोड़ दीजिये। अगर आप ऐसा नहीं करेंगे तो हमें लड़ने पर बाध्य हो जाएँगे। हम अवश्य ही अपने लोगों को छुड़ाकर ले जाएँगे।'' अर्जुन ने कहा।

किन्तु गंधर्वों ने अर्जुन का प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया और लड़ने पर तुल गये।

पांडवों और गंधर्वों में युद्ध आरंभ हो गया। दुर्योधन व उनके भाइयों को घेरकर जिस प्रकार पकड़ लिया, उसी प्रकार पाँडवों को भी घेरकर पकड़ने का गंधर्वों का उद्देश्य था। पर पांडवों पर यह चाल चल न सकी। अर्जुन ने गंधर्व सैनिकों को अपने बाणों से तीव्र रूप से घायल किया। उनसे फेंके गये आयुधों को बीच ही में अर्जुन ने सुनायास काट डाला। युद्ध-मध्य में चित्रसेन ने कहा ''अर्जुन, तुमने मुझे पहचाना नहीं? मैं चित्रसेन हूँ। तुम्हारा मित्र हूँ। यह दुष्ट दुर्योधन, तुम लोगों को और द्रौपदी को अपना वैभव दिखाकर तुम्हें नीचा दिखाने के उद्देश्य से घोषयात्रा की आड़ में परिवार सहित यहाँ आया है। देवेंद्र ने दुर्योधन के इस नीच स्वभाव पर क्रोधित होकर इन्हें पकड़कर ले आने की हमें आज्ञा दी। हम उनकी आज्ञा का पालन मात्र कर रहे हैं।''

अर्जुन ने कहा ''यह दुष्ट है किन्तु हमारा दायाद है। हमारे अग्रज धर्मराज की आज्ञा है कि हम इसे छुड़ाकर ले आयें। उनकी आज्ञा का पालन करना हमारा धर्म है। आप स्वयं धर्मराज से मिलिये और वही कीजिये जो वे कहेंगे तो अच्छा होगा। आपका मित्र व शिष्य होने के नाते यह मेरी विनती है।''

चित्रसेन पांडवों को लेकर आश्रम आया और धर्मराज से जो हुआ, सविस्तार बताया। सब कुछ सुनने के बाद धर्मराज ने कहा ''गंधर्वराज, आपने दुर्योधन को मार नहीं डाला, यह हमारा सौभाग्य है। हमारा वंश एक बड़ी विपत्ति से बच गया। आपसे मिलकर मुझे बहुत हर्ष हुआ। आप कृपया दुर्योधन आदि को छोड़ दीजिये।''

चित्रसेन ने कौरवों को छोड़ दिया और सपरिवार स्वर्ग लौटा।

बाद धर्मराज ने दुर्योधन को पास बुलाकर कहा ''भ्राता, भविष्य में कभी भी ऐसा दुत्साहस मत करो। इससे कोई सुख प्राप्त होनेवाला नहीं है। जो हुआ, भूल जाओ और अंत:पुर की स्त्रीयों के साथ लौट जाओ।''

'चन्दामामा' की ख़बरें

मदर थेरीसा का डाक टिकेट

मदर थेरीसा को १९७९ में नोबेल शांति पुरस्कार प्राप्त हुआ। भारत की सरकार ने १९८० में अति उन्नत पुरस्कार 'भारतरत्न' देकर उनका सम्मान किया। उपरांत हमारी सरकार ने उनके सम्मानार्थ प्रत्येक डाक का टिकट निकाला। जब उन्हें नोबेल शांति पुरस्कार प्राप्त हुआ, तब स्वीडन ने भी उनके नाम पर डाक का टिकट निकाला था। अब मध्य इटली के संसार भर के अति प्राचीन गणतंत्र के नाम से सुप्रसिद्ध शानमरीनो ने मदर थेरीसा के सम्मान में 'युरोपा' नामक डाक का टिकट निकाला। इस टिकट पर सुप्रसिद्ध अभिनेत्री गीना लोल्लोब्रिगिडा से चित्रित

मदर थेरीसा का चित्र है। इसपर उसका हस्ताक्षर भी है। मदर थेरीसा डी कलकत्ता के नाम से निकले इस टिकट का दाम है ७५० लीर। १९७५ में अंतर्राष्ट्रीय आहार संस्था से प्रकाशित सिरिस पदक में भी मदर थेरीसा का चित्र एक तरफ़ है। यह पदक उन्हें दिया जाता है, जिनका लक्ष्य है 'सभी को आहार'। ये पदकधारी भूख को मिटाने के प्रयत्नों में जी-जान से लग जाते हैं।

बढ़ी विद्यार्थियों की संख्या

कलकत्ते की सौथ पाइंट उन्नत पाठशाला चालीस साल पुरानी है। १९५४ में जब यह प्रारंभ हुई, तब विद्यार्थियों की संख्या सत्रह मात्र थी। अब उस पाठशाला में क़रीबन बारह हज़ार विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

सिनिमा का पागलपन

मिथुन देवांगन मुँबई के एक होटल में रसोइया है। इस युवक ने हाल ही में बहुत ही सफल एक हिन्दी सिनेमा को एक ही थियेटर में लगातार दो सौ बार देखा। आप जानते हैं इसके लिए कितना ख़र्च किया? पाँच हज़ार रुपये। अब भी जब कभी फुरसत मिले, वह इस फिल्म को देखता रहता है।

अनूठा क्रिसमस

पूर्णिमा व क्रिसमस का एक साथ आना बिरले ही संभव होता है। पिछले दिसंबर का क्रिसमस एक ऐसा ही क्रिसमस है। पिछली बीस शताब्दियों में ऐसा विलक्षण क्रिसमस केवल सत्तर बार ही आया। बीसवीं शताब्दी में पाँच बार याने १९०१, १९२०, १९३१, १९७७, १९९६ वर्षों में पूर्णिमा व क्रिसमस एकसाथ आये। एक और बार पूर्णिमा की रात को क्रिसमस त्योहार मनाने के लिए हमें और उन्नीस साल तक याने २०१५ तक प्रतीक्षा करनी होगी।

‘चन्दामामा’ परिशिष्ट -१००

हमारे देश के वृक्ष

काजू

काजू और काजू के तेल के व्यापार में भारत का स्थान अब संसार भर के देशों में से आगे है। नब्बे प्रतिशत व्यापार हमारे ही देश से हो रहा है।

काजू ब्रेजिल देश से लगभग चार सौ सालों के पहले पुर्तगाली हमारे देश में ले आये। यद्यपि यह दक्षिणी राज्यों में अधिक व्याप्त है, परंतु मुँबई से लेकर कन्याकुमारी तक के पश्चिमी समुद्र-तटों पर इसकी फ़सल अधिकाधिक होती है। देश भर की उत्पत्ति के सत्तर प्रतिशत की फ़सल यहीं होती है। ऐसे वातावरण में रेतीली भूमि पर यह उत्पन्न होता है, जहाँ न ही अधिक गर्मी हो, न ही अधिक सर्दी।

पंद्रह मीटरों तक पनपनेवाले ये घने पेड़ तीस-चालीस सालों तक ज़िन्दा रहते हैं। इसके पत्ते चौड़े व मोटे होते हैं। ये पीले तथा लाल रंगों में दिसंबर से मार्च तक गुच्छों में खिलते हैं। मार्च महीने में ये तैयार हो जाते हैं। फलों के पक्के होने में ६०-७० दिन लगते हैं। काजू के बीज का फल के बाहर होना वृक्षशास्त्र में ही एक विचित्र विशेषता है। बीज के चारों ओर फैला दृढ़ छिलका जब कोमल होता है, तब उसका रंग हरा होता है। जैसे-जैसे वह पक्का होता जाता है, वैसे-वैसे ऊदे रंग में यह परिवर्तित होता है। काजू के पके फल को भी खाते हैं। साधारणतया यह पेड़ एक ऋतु में ३०-३५ कि.ग्रा. फल उत्पन्न करता है। काजू में लोहे की शक्ति, ए विटमिन आदि पोषक पदार्थ पर्याप्त मात्रा में हैं। इसे कच्चा भी खाते हैं और भूनकर भी।

बंगाली में इसे ‘हिज्ली बादाम’, हिन्दी, मराठी, गुजराती में ‘काजू’ तमिल में ‘मुंदिरि’ तेलुगु में ‘जीडिमामिड़ी’, मलयालय में ‘काषु-अंडी’ कहते हैं।

काजू के छिलकों से निकाला जानेवाला तेल व्यापारिक दृष्टि से बहुत ही मूल्यवान है। काजू की लकड़ी का उपयोग जहाज़ों के निर्माण में तथा पेटियाँ बनाने में होता है।

हमारे देश के ऋषि

वालखिल्य

वालखिल्य सप्त ऋषियों में से एक क्रत नामक मुनि के पुत्र थे। उन सबने प्रमाणित किया कि तपोबल की प्राप्ति के लिए देह-प्रमाण अवरोध नहीं है। अंगुष्ठ प्रमाण के इन देहधारियों की संख्या बीस हज़ार है। ये मुनिकुमार एक साथ पेड़ की टहनियों में उल्टे लटकते थे और तपस्या करते थे।

एक बार कश्यप प्रजापति ने यज्ञ करना चाहा। उस यज्ञ को सफल बनाने के लिए मुनि, इंद्र आदि देवता आये और यथाशक्ति सहायता पहुँचायी। बालखिल्य भी अपने से जितना हो सके, सहायता पहुँचाने के लिए आये। यज्ञ के लिए आवश्यक सूखी लकड़ियाँ व पुष्प समेटकर ले आये। अंगुष्ठ भर के ये मुनिकुमारगण उन्हें ले आने में बड़ी तक़लीफ महसूस कर रहे थे। उनकी इस स्थिति को देखकर इंद्र खिलखिलाकर हँस पड़े। इस हँसी ने वालखिल्यों को तीव्र रुप से दुख पहुँचाया। वे क्रोधित हो उठे और उन्होंने संकल्प किया कि अहंकारी इंद्र के विरुद्ध एक और इंद्र की सृष्टि हो। अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए वे घोर तपस्या करने लगे।

यह देखकर इंद्र घबरा गये। उन्होंने कश्यप से प्रार्थना की कि वे इस तपस्या को किसी प्रकार रोक दें। कश्यप की इच्छा के अनुसार उन्होंने तपस्या रोक दी। किन्तु अब तक उनकी तपस्या के फलस्वरूप प्राप्त उनके तवोबल को कश्यप - विनता के पुत्र गरुड़ ने स्वीकार किया।

उत्तरोत्तर जब गरुड अमृत के लिए स्वर्ग गया तब इंद्र ने उसे रोकने का ज़बरदस्त प्रयत्न किया, लेकिन वह सफल नहीं हो पाया। इस प्रकार इंद्र को पदच्युत करने में तपोधनी वालखिल्य कुछ हद तक सफल हुए।

एक दिन गरुड़ एक वृक्ष पर उतरा। उस वृक्ष की शाखाओं में वालखिल्य उल्टे लटके ध्यान में मग्न थे। गरुड़ को यह मालूम न था। शाखा टूट गयी। टूटते समय गरुड़ ने विषय जान लिया और उस शाखा को भूमि पर गिरने से पहले ही पकड़ लिया और आकाश में घूमने लगा। अंत में कश्यप की सलाह के अनुसार उस शाखा को वालखिल्यों के ध्यान को भंग किये बिना बड़ी ही सावधानी से गंधमादन पर्वत पर पहुँचाया।

क्या तुम जानते हो?

१. उस राज परिवार का क्या नाम है, जिसने रूस पर तीन सौ सालों से अधिक शासन चलाया ?

२. किस देश की प्रजा षिंटों धर्म का अनुसरण करती है ?

३. संयुक्त राष्ट्र संघ के झंडे में कौन-कौन-से रंग हैं ?

४. तिमिंगल के कितने दाँत हैं ?

५. साधिकार 'पवित्र बाइबल' ग्रंथ किस वर्ष से उपयोग में लाया गया ?

६. दवेनदी का संगम किस समुद्र में होता है ?

७. हमारे देश की ऊँची सड़क कौन-सी है ?

८. क्या पक्षियों के दाँत हैं ?

९. 'सप्तऋषि' के नाम जानते हो ?

१०. आर्यभट्ट कौन थे ? किस विषय में वे प्रसिद्ध हैं ?

११. हमारे देश की सर्वप्रथम महिला कौन थीं, जो राज्यपाल बनीं ?

१२. भारत के प्रथम वायसराय कौन थे ?

१३. तिरुवल्लुवर से रचित 'तिरुक्कुरल' नामक सुप्रसिद्ध ग्रंथ में तीन भाग हैं। वे क्या हैं ?

१४. फ्रांस की क्रांति का नारा क्या था ?

१५. विंबुलडन में पुरस्कार प्राप्त सर्वप्रथम नीग्रो क्रीडाकारिणी का क्या नाम है ?

उत्तर

१. रोमनोव

२. जापान

३. नील, सफ़ेद

४. २००

५. १६११

६. काला समुद्र

७. जम्मू-कश्मीर के लेह से नीब्रा घाटी तक का, १८,३०० फुटों की ऊँचाई की सड़क।

८. नहीं

९. अत्री, अंगीरस, कृत, मरीचि, पुलह, पुलस्त्य, वसिष्ठ

१०. आर्यभट्ट चंद्रगुप्त विक्रमादित्य के काल के सुप्रसिद्ध गणित शास्त्रवेत्ता थे (ई.स. ४७६-५२०)। वे खगोल शास्त्रज्ञ भी थे। उन्होंने ही इसकी विशिष्टता पर प्रकाश डाला और वर्तमान आलजीब्रा की नींव डाली।

११. सरोजिनी नायडु, उत्तर प्रदेश

१२. लार्ड कानिंग

१३. धर्म, अर्थ, काम

१४. स्वेच्छा, समानता, भातृभाव

१५. अमेरीका की अल्थिया गिब्बन. महिला सिंगल टैटिल जीतीं। (१९५६-१९५७)

मांत्रिक महंकाली

भरतपुर गाँव में मालती नामक एक औरत थी। उसका पति साधारण किसान था। उनके तीन बच्चे थे। वह अपने पति को भगवान मानती थी और सास-ससुर की भी सेवाएँ करती थी। बिना किसी चिंता के बड़े ही आराम से उनकी ज़िन्दगी कट रही थी।

एक दिन अचानक मालती बीमार पड़ी। उपवास को ही परम औषध मानकर, दवाएँ दिये बिना कुछ दिनों तक उसे पलंग पर लिटाये रखा। इस कारण वह बिल्कुल कमज़ोर हो गयी। मालती के स्वास्थ्य में कोई सुधार नहीं हुआ। पड़ोस के गाँव से वैद्य गंगाराम बुलाया गया। उसके दिये कषाय या गोलियों ने कोई काम नहीं किया।

इस स्थिति में बिना बुलाये ही मांत्रिक महंकाली वहाँ आया। उसने मालती को कुछ देर तक एकटक देखने के बाद उसके पति से कहा "तुम्हारी पत्नी पर भूत सवार है। यह भूतनी भी किसी दूसरे गाँव की नहीं है। वह हमारे ही गाँव की सक्कू है। यह रोग नहीं है। इसलिए दवाओं का इसपर कोई असर नहीं पड़ेगा।"

सक्कू का नाम लेते ही वहाँ उपस्थित सब लोगों के साथ-साथ मालती का पति भी भय से काँप उठा। यह सक्कू छे महीनों के पहले रात के अंधियारे में तालाब में पानी लाने गयी और फिर कभी वापस नहीं आयी। सबेरे सबने देखा कि शव तालाब में तैर रहा है। ग्राम के कुछ लोगों ने कहा कि यह आत्महत्या है। कुछ औरों ने कहा कि तालाब के पथ्थरों पर चिपकी काई के कारण फिसलकर पानी में डूब गयी।

मालती के पति ने भय से काँपते हुए कहा "तब क्या सक्कू भूतनी बन गयी?"

"नहीं तो करेगी भी क्या? शास्त्रों में लिखा हुआ है कि सूर्यास्त के बाद गाँव की

रमा रावत

पूर्वी दिशा में स्थित तालाब में जो डूब जाते हैं, उनका भूत या भूतनी बन जाना निश्चित है।'' महंकाली ने यों कहा और जल्दी-जल्दी बिना मुड़े वहाँ से चलता बना।

जब से मांत्रिक ने कहा कि मालती पर भूतनी सवार है, तब से सबको उसमें वे लक्षण दिखायी देने लगे।

यह सब कुछ सुनने के बाद उस गाँव के एक अध्यापक रमानाथ ने मालती के पति को सलाह दी ''भूत वैद्यों की अंटसंट बातों पर ध्यान मत दीजिये। उनमें सच्चाई नहीं होती। तीनों वक्त उसे अच्छा आहार दीजिये। थोड़े ही दिनों में वह चलने-फिरने के लायक हो जायेगी।''

यह सलाह किसी को सही नहीं लगी। एक रिश्तेदार ने कहा कि आँजनेय का नाम लेने से भूतनी कोसों दूर भागेगी तो एक दिन रात को घर के सामने कठपुतलियों के खेल का भी इंतजाम हुआ। यह खेल रामायण पर आधारित था। थोड़ी देर तक देखने के बाद आँजनेय का अंश देखे बिना ही मालती अंदर चली गयी। दूसरे दिन एक मदारी बुलवाया गया तो उसने तीन बंदरों से तीन घंटों तक नचवाया। बीमार मालती खेल देखती रही और खूब हँसती रही। उसकी इस ज़ोरदार हँसी को लेकर बहुतों ने टिप्पणी की कि वह नहीं, भूतनी हँस रही है।

मालती का एक शुभचिंतक व उसका पति दोनों महंकाली की झोंपड़ी में उससे मिलने गये। उन्होंने ठान लिया कि मालती की चिकित्सा अगर कोई कर सकता है तो वह मांत्रिक ही कर सकता है। उन्हें देखते ही महंकाली ने कहा ''मैं जानता था कि एक न एक दिन आप मेरे यहाँ जरूर आयेंगे। अगर आप न भी आते तो मैं खुद चला आता। इतना बड़ा मांत्रिक इस गाँव में है और उसी

मंत्र पढ़ना शुरु कर दिया। थैली में से हल्दी, कुंकुम और नींबू निकाले। फिर ज़मीन पर रंगोली सजायी। पाटा डाला और उसपर मालती को बिठाया। बाद कुछ मंत्र पढ़ते जाने लगा, जो लोगों को ठीक तरह से सुनायी नहीं दे रहे थे। नींबू काटे और मालती के सिर पर से इधर-उधर फेंकने लगा। नीम के पत्तों से मालती के सिर व पीठ को मारने-पीटने लगा।

अपनी दीदी की तबीयत का हाल जानकर शहर में पढ़ता हुआ मालती का भाई अर्जुन उसे देखने वहाँ आया। इस कांड को देखकर वह चिल्ला पड़ा ''रुक जाओ। दीदी को मत मारो।''

अर्जुन की चिल्लाहट से भयभीत महंकाली ने नीम के पत्ते नीचे फेंक दिये। वह उसे गुर्राकर देखता हुआ बोला ''शहर की पढ़ाई युवकों को गुमराह करती है, यही इसकी गवाही है। ठीक है, कल फिर से इसी वक्त पर आऊँगा।'' फिर उसने मालती के पति से कहा ''कल दक्षिणा भेजते समय यह मत भूलना कि एकदम काली मुर्गी ही भेजी जाए। याद रखना कि मुर्गी के एक पंख में भी सफ़ेदी न हो।'' थैली अपनी भुजा में लटकाकर चलता बना। उसके चले जाने के बाद अर्जुन ने अपने बहनोई से जो-जो हुआ, जाना। अड़ोस-पड़ोस के लोगों ने भी बताया कि तालाब में डूबकर मरी सक्कू भूतनी बनकर उसकी दीदी पर सवार हो गयी। उस दिन रात को महंकाली फिर से आया। अपने साथ नीम की बड़ी-बड़ी शाखाएँ भी ले आया। आते ही थैली में रखी हुई सारी सामग्री ज़मीन

की आँखों के सामने भूतनी किसी को सता रही है तो इससे बढ़कर मेरे लिए अपमानजनक बात और क्या हो सकती है।''

''काली, कठपुतलों के खेल में हनुमान को देखकर भी भूतनी मेरी पत्नी को छोड़कर नहीं भागी।'' मालती के पति ने चिंतित होते हुए कहा।

''इस छोटी-सी बात पर हनुमान का नाम लेना ठीक नहीं। वे पिशाच-पिशाचनियों पर अपने बल का प्रयोग करते हैं, अपनी पूँछ चलाकर उन्हें दूर भगाते हैं किन्तु गाँव की डायिन सक्कू पर थोड़े ही अपने बल का प्रयोग करेंगे। अज्ञान की हद हो गयी।'' कहकर एक थैली अपने कंधे पर डाल ली और उनके पीछे-पीछे चल पड़ा।

घर में पहुँचते ही मांत्रिक ने ज़ोर-ज़ोर से

पर उँडेलते हुए जोर से कहने लगा "सक्कू बहन, आ जा, राख बनी सक्कू, निकल जा, मेरी प्यारी बहन सक्कू, मालती को छोड़ दे" कहता जा रहा था और मालती को नीम के डंडों से मारता जा रहा था।

दूसरे ही क्षण बहुत ही तेज़ी से अर्जुन ने अंदर प्रवेश किया। उसके दोनों हाथों में इमली के पेड़ के डंडे थे। उछलने-कूदने लगा और कहा "अरे महंकाली, मैं उन भूत-भूतनियों में से नहीं हूँ, जिन्हें तुम बुला रहे हो। मैं अंबा हूँ, सक्कू मेरी बहन है। मैंने सुना है कि जब मेरी बहन तालाब में डूबकर मर रही थी, तब तुम किनारे पर खड़े होकर मज़ा ले रहे थे। वह सक्कू अब तुम्हारी झोंपड़ी में आग लगाने गयी है। भोर के तारे के निकलने के पहले ही अगर तुम गाँव छोड़कर नहीं भागोगे तो इमली की जलती हुई लकड़ियों में तुम्हें भून दूँगा और खा जाऊँगा।"

महंकाली, अर्जुन की बातें सुनकर भय से थर-थर काँपने लगा। वह द्वार की तरफ़ बढ़ता हुआ कहने लगा "प्रणाम अंबा, प्रणाम। मुझे क्षमा करो।" कहता हुआ वह भागने लगा।

अर्जुन ने उसे रोका और इमली के डंडों से उसे खूब पीटा। फिर उसका पीछा करके उसे भगाया।

वहाँ उपस्थित सबों को आश्चर्य होने लगा। उनकी समझ में कुछ न आया। थके अर्जुन ने लोटे भर का पानी पिया और दीदी के बगल में बैठ गया। उसके बहनोई ने साले से पूछा "अरे अर्जुन, सक्कू के साथ-साथ अंबा भी क्या भूतनी बन गयी? मैं क्या जानूँ कि वह तुम पर क्यो सवार हो गयी?"

"बहनोई, विश्वास करनेवाला मूर्ख हो, तो मरे सब लोग भूत-भूतनी ही बनते हैं। घर में इतना काम था कि दीदी अकेली नहीं कर पायी। अलावा इसके, खाना ठीक तरह न खाने के कारण बीमार पड़ गयी। कमज़ोरी ने उसे रोग-ग्रस्त कर दिया। अब अच्छा यही होगा कि अपने बड़े बेटे की शादी कर दो और बहू घर ले आओ। वह घर के कामों में हाथ बंटायेगी। मैं दीदी को कल ही शहर ले जाता हूँ। वहाँ अच्छे वैद्य हैं। एक महीने के अंदर दीदी स्वस्थ होकर लौटेगी।"

"तुम और तुम्हारी दीदी जो चाहते हैं, करो।" मालती के पति ने प्यार-भरे स्वर में कहा।

प्रगल्भ शास्त्री का पंचांग

बहुत पहले की बात है। ज़मींदार भूपति राम बहादुर ने अपने पुत्र के राज्याभिषेक की घोषणा की। यह उत्सव चार दिनों तक चला। भेंटे पाने की आशा लेकर कितने ही कवि, पंडित, पुरोहित, कलाकार अपने परिवार सहित वहाँ आये।

ज़मींदार ने उन-उनकी योग्यता तथा प्रसिद्धि के आधार पर एक सूची बनवायी और किसी को छोड़े बिना सबका समुचित रूप से आदर-सत्कार किया। परंतु जब पुरोहितों की सूची की घोषणा हुई, तब पवनपुर के प्रगल्भ शास्त्री को लगा कि उनका नाम उस सूची में जोड़ा नहीं गया है, जिन्हें अधिकाधिक भेंटे प्राप्त होनी हैं। वह इस बात को लेकर मन ही मन संतप्त होने लगा।

जब उसका नाम घोषित हुआ तब वह युवराज के पास गया और उनसे दी हुई चार अशर्फ़ियों की दक्षिणा ली। उसने युवराज से कहा "प्रभु, चार दिनों से यहाँ मैं इसलिए प्रतीक्षा नहीं कर रहा हूँ कि आप मुझे कोई भेंट देंगे। अपने ही गाँव में पंचांग लेकर घर-घर में जाऊँ और तिथि, वार व नक्षत्र बताऊँ तो इससे अधिक कमा सकता हूँ। आप बुरा न समझें तो, आपके गाँव का एक पुरोहित होने के नाते, आपने अभी जो दक्षिणा दी, आपको भेंट के रूप में समर्पित करना चाहूँगा। शतमानं भवति।" आशीर्वाद देते हुए उसने दक्षिणा युवराज के हाथ में रख दी।

वहाँ उपस्थित सबों को प्रगल्भ शास्त्री के अहंकार पर क्रोध आया। किन्तु ज़मींदार ने प्रशांति से कहा "ज़मींदार नदी की तरह है। आश्रितों को जिस प्रकार नदी उन-उनके लाये हुए पात्रों के परिमाण के अनुसार जल देती है, उसी तरह हमने भी कही-सुनी उनकी योग्यताओं के आधार पर दक्षिणाएँ दीं। अगर आपका दावा है कि आपको इससे बड़ा पुरस्कार

लक्ष्मीकांत

मिलना चाहिये तो अभिव्यक्ति का यह विधान नहीं। छोटा-सा पुरस्कार मानकर आप उसे नदी में फेकेंगे तो इससे नदी को कोई नष्ट नहीं पहुँचेगा। जो भी हो, आपका यह व्यवहार नितांत अनुचित और अक्षम्य है।''

प्रगल्भ शास्त्री लज्जित हुआ। उसने सबों के सम्मुख ज़मींदार से क्षमा माँगी। अब ज़मींदार ने उसकी परीक्षा ली और उसे सुयोग्य ठहराते हुए उसका समुचित आदर-सत्कार किया। राज्याभिषेक-उत्सव की समाप्ति के बाद प्रगल्भ शास्त्री पवनपुर पहुँचा।

सबने माना कि अहंकार-पूरित प्रगल्भ शास्त्री से यद्यपि त्रृटि हुई परंतु उसने युवराज को दक्षिणा लौटाकर बड़ा साहस किया। सबके सब उसके साहस की प्रशंसा करने लगे। कहने लगे कि साहसी हो तो ऐसा हो। तब से वह गाँव का एक प्रमुख व्यक्ति माना जाने लगा। उससे उसका गर्व और बढ़ता गया। वह समझने लग गया कि ज़मींदार का धिक्कार करके मैं उन्हीं से आदर-सत्कार पाने में कृतकृत्य हुआ।

उस दिन से धनियों और दरिद्रों का भेद भुलाकर सबसे एक समान दक्षिणा की मांग करने लगा। शादी कराये या व्रत रखवाये, अधिक रक़म ऐंठने लगा। यह सत्य भूल ही गया कि मैं पुरोहित हूँ और इसकी कुछ सीमाएँ हैं।

उस समय पवनपुर गाँव के ही कवि आनंद के पिता की मृत्यु हुई।

आनंद ज़मींदार के दरबार का कवि था, इसलिए ग्यारहवें दिन पर संपन्न होनेवाले कर्मकांड पर ज़मींदार स्वयं उपस्थित हुआ।

कर्मकांड की समाप्ति के बाद, चिंताग्रस्त आनंद से ज़मींदार ने कहा ''आप पंडित हैं, ज्ञानी हैं। मानता हूँ कि पिता की कमी की पूर्ति नहीं हो सकती। फिर भी आपको इतना

दुखी होना नहीं चाहिये ।'' आनंद ने कहा ''प्रभू, मेरे पिताजी ने अनेकों कष्ट झेलकर गृह-निर्माण किया । इसीलिए आख़िरी क्षण तक घर में ही उन्हें खाट पर ही लिटाकर रखा । उनकी मृत्यु जिस नक्षत्र पर हुई, वह अच्छा नहीं है । पुरोहित शास्त्री का कहना है कि उस घर में हम चार महीनों तक रह नहीं सकते । कहे जानेवाले अच्छे और बुरे नक्षत्रों के कारण मनुष्य उसी घर में मर नहीं सकता, जिसे उसने खुद कष्ट झेलकर बनाया । इसी को लेकर मैं चिंतित हूँ ।''

ज़मींदार ने उसे करुणा-भरी दृष्टि से देखी और प्रगल्भ शास्त्री तथा गाँव के कुछ प्रमुख लोगों की सभा बुलायी । उनसे कहा 'मुझे आपकी मदद चाहिये । वास्तुशास्त्र के अनुसार आनंद का घर बिल्कुल ही ठीक है । मैं कुछ समय तक इस घर में रहना चाहता हूँ । यहाँ आने के बाद मेरे मन को शांति प्राप्त हुई । मुझमें जो अशांति व असंतृप्ति थी, वह दूर हो गयी । मैं अब बिल्कुल प्रशांत हूँ ।'' फिर उसने शास्त्री से कहा ''मैंने सुना कि आपने कवि आनंद को इस घर में रहने से मना कर दिया । इसका कोई वैकल्पिक उपाय हो तो सुझाइये ।''

प्रगल्भ शास्त्री ने ज़मींदार से कहा ''प्रभू, शास्त्र, आचार, संप्रदाय आदि के मूलकारक हैं, मुनि अपस्तंभ, हम उनकी यह बात मानते भी हैं कि देश-काल की स्थितियों के अनुसार इनमें परिवर्तन लाया जा सकता है । कवि आनंद उदकशांति-यज्ञ करवाये तो घर का दोष मिट जायेगा और निवास-योग्य होगा ।''

ज़मींदार ने मुस्कुराते हुए उसकी ओर देखा । प्रगल्भ शास्त्री की अध्यक्षता में ही उदकशांति-यज्ञ करवाया और लौटने के पहले उससे कहा ''हमारे आचार-व्यवहारों में अनागरिक व वर्तमान काल की पद्धतियों के विरुद्ध कोई विषय हों तो इनसे छुटकारा पाने के लिए अन्य मार्ग अपने पंचांग में सुझाइयेगा । उनका विवरण भी दीजियेगा । आप ऐसा करेंगे तो आपका उच्च स्तर पर सम्मान करूँगा और भेंटें भी दूँगा ।''

इस प्रकार कवि आनंद को घर छोड़ना नहीं पड़ा । प्रगल्भ शास्त्री ने पंडितों से दीर्घ चर्चाएँ की और शुभ-अशुभ कार्यों में सरल परिवर्तनों को अपने पंचांग में स्थान दिया । ज़मींदार ने उसका सत्कार किया ।

समस्या

भूचाल, कुबेरपुर का मशहूर कपड़ों का व्यापारी था। उसकी पत्नी सच्चे अर्थ में धर्मपत्नी थी। उसकी बेटी लक्ष्मी की शादी पड़ोस के गाँव के अनाज-व्यापारी सीताराम के बेटे के साथ वैभवपूर्वक संपन्न हुई।

इस विवाह के बाद उसने अपना व्यापार अपने बेटे राधेश्याम के सुपुर्द किया। बिटिया लक्ष्मी अपने ससुराल में आराम से रह रही है। बेटे ने अपने व्यापार पर दृष्टि केंद्रित की और सुचारू ढंग से उसे चला रहा है। यों अपने प्रयासों में वह सफल हुआ।

भूचाल का परिवार यों निश्चिंत परिवार था। उसे इस स्थिति में हाथ पर हाथ धरे आराम से बैठना चाहिये था। किन्तु भूचाल हमेशा दुखी रहता था और अकेले कमरे में बैठकर चिंताग्रस्त रहता था।

क्रमशः उसकी भूख मिट गयी। समय पर भोजन करता नहीं था। रातों में सोता नहीं था और अपने ही आप बड़बड़ाता रहता था। पत्नी या पुत्र उससे बातें करने लगते तो चिढ़ उठता था। भूचाल की स्थिति को देखकर उसकी पत्नी घबरा गयी। कितने ही वैद्यों ने अच्छी तरह से मुआयना करने के बाद साफ़-साफ़ कह दिया कि वह किसी भी रोग का शिकार नहीं है। उसकी पत्नी को संदेह हुआ कि उसपर कहीं भूत-प्रेत तो सवार नहीं हुए ? उसने भूत वैद्यों को बुलवाकर उनसे मंत्र-तंत्र पढ़वाया। तावीज़ पहनवाया। पर कोई फ़ायदा नहीं हुआ। भूचाल में कोई परिवर्तन नहीं आया।

तीर्थ यात्राएँ करने के बाद उसका समधी रतन भूचाल से मिलने आया। यह केवल औपचारिक मिलन था। उसे देखते ही भूचाल की पत्नी ने रोते हुए कहा ''आजकल आपके समधी का स्वास्थ्य बिल्कुल खराब हो गया। मुझे तो वे पुराने

दिन ही अच्छे लगने लगे हैं। जब हम नये-नये इस गाँव में आये, तब वे कपड़ों की गठरी सिर पर संभाले गली-गली घूमा करते थे और कपड़े बेचते रहते थे। छोटे से एक घर में किराये पर रहते थे। आमदनी कम पड़ती थी। फिर भी आराम से रहते थे। कोई ग़म ही नहीं था। हम एकदम संतृप्त रहा करते थे। भाग्य ने हमारा साथ दिया। कपड़ों की दूकान खोली। खूब कमाया। बेटे ने व्यापार संभाला और तरक्की की। बिटिया आपके घर में सुखी है। सच कहा जाए तो उनके सामने अब कोई समस्या ही नहीं है। उनकी ज़िन्दगी में किसी भी प्रकार की कमी नहीं है।'' उसने यों अपने पति के बारे में सविस्तार बताया।

रतन ने समधिन की कही सारी बातें ध्यान से सुनीं। फिर उसने कहा ''तुम चिंतित मत होना। धीरज धरो। लगता है, तुम्हारा ग्रहबल ठीक नहीं है। मुझे विश्वास है कि जल्दी ही वह ठीक हो जायेगा।'' कहकर उसने भूचाल से बातें कीं और वहाँ से चला गया।

पंद्रह दिन भी नहीं हुए। भूचाल की पत्नी ने देखा कि उसकी बेटी लक्ष्मी रोती-बिलखती मायका आ गयी।

''क्या हुआ बेटी ? समाचार दिये बिना अकेली ही आ गयी। क्या पति से झगड़ा हो गया ? बताओ तो सही, ऐसा क्यों हुआ ? ऐसी ग़लती तुमसे क्या हो गयी, जिसके कारण तुम्हें अपना ससुराल छोड़ना पड़ा।'' लक्ष्मी की माँ ने बड़ी ही आतुरता-भरे स्वर में पूछा।

''क्या बताऊँ माँ। तुम्हारे दामाद को व्यापार में बहुत बड़ा नुक़सान हुआ। कर्ज़दारों के दबाव के कारण घर से चले गये और बैरागी बन गये। वे यह लिखकर भी चले गये कि मैं कभी घर नहीं लौटूंगा।'' कहती हुई लक्ष्मी फूटफूटकर रोने लगी।

कमरे में बैठे भूचाल ने यह सब कुछ सुना और तेज़ी से बाहर आकर क्रोध से कहने लगा ''तुम्हारा ससुर क्या हाथ पर हाथ धरे चुप बैठा है ? वह आख़िर कहता क्या है ?''

''पिताजी, क्या कहूँ। वे कहते हैं कि मैं तुम्हारे पिता को मुख दिखाने लायक़ नहीं रहा। वे हमेशा कमरे में ही रहते हैं। बाहर ही नहीं आते।'' कहकर वह ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी।

''रोना मत बेटी। तुम्हारे पति को ढूँढ़कर

लेना मेरा काम है।" भूचाल ने कहा और कमरे में पड़ी लाठी लेकर किराये की गाड़ी में समाधि का गाँव जाने निकला।

रतन के घर पहुँचते ही भूचाल उसका नाम लेकर ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगा। कमरे से बाहर आये रतन को देखते ही कहा "लक्ष्मी ने तुम्हारे बेटे की करतूत बनायी। आगे जो करना है, उसे भुलाकर जब देखो कंबल ओढ़े कमरे में पड़े रहते हो। क्या इससे कोई काम बनेगा ? चलो, दोनों मिलकर उसे ढूँढ़ते हैं।" रतन को लेकर वह दामाद की खोज में निकल पड़ा।

आसपास के गाँवों में जितने भी आश्रम और मठ हैं, उनमें दोनों ने ढूँढा। आख़िर बैरागी बने लक्ष्मी के पति को एक मठ में पाया।

रतन, बेटे से कुछ कहने ही वाला था कि इतने में भूचाल ने दख़ल देते हुए दामाद से कहा "आश्रम, मठ आदि उनके लिए हैं, जो भक्त होते हैं। ये स्थल उनके लिये नहीं है, जिन्होने व्यापार में सब कुछ खो दिया। व्यापार में लाभ-नष्ट सहज है। क्या कोई नुक़सान से डरकर घर और पत्नी को छोड़कर भागेगा ? फिर से अच्छा अनाज खरीदो और व्यापार शुरू कर दो। जो धन चाहिये, मैं दूँगा। कर्ज़ ही समझो।" उसने दामाद को यों समझाया-बुझाया और बाप-बेटे दोनों को अपने घर ले आया।

बैरागी के वेष में ही सही, लौटे अपने पति को देखकर लक्ष्मी बेहद खुश हुई। भूचाल ने दामाद और बेटी को नये वस्त्र प्रदान किये और रतन को पच्चीस हज़ार नक़द देते हुए कहा "समधी, इस धन को लेकर अपने बेटे से फिर से व्यापार शुरु करावो। तुम भी चुप मत बैठना। मेरे दामाद की मदद करना। अपने मार्ग-दर्शन से उसे कामयाब व्यापारी बनाना। मेरा समझना है कि व्यापार में वह अब भी कच्चा ही है।"

रतन ने हँसते हुए वह रक़म उसे वापस दे दी और कहा "मेरे बेटे ने व्यापार में कुछ नहीं खोया। बेटे को व्यापार सौंपने के बाद तुम हमेशा परेशान रहते थे; चिंतित दिखते थे; बात-बात पर चिढ़ते थे। तुम्हारी पत्नी तो बिल्कुल घबरा गयी। तुममें तब्दीली लाने के लिए हम तीनों ने मिलकर यह नाटक किया। हम इसमें सफल हो गये।"

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता : : पुरस्कार रु. १००

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ, मई, १९९७ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी ।

S.G. SESHAGIRI

MAHANTESH C. MORABAD

* उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। * '३० मार्च, ९७ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। * अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००/- का पुरस्कार दिया जायेगा। * दोनों परिचियोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें।

चन्दामामा, चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास - २६.

जनवरी, १९९७ की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **सर्दी में यह धंधा मंदा**

दूसरा फोटो : **कपड़े पहन ले बेटी चंदा**

प्रेषक : **बिनीता शर्मा**

केशर देबी शर्मा, भूमा बड़ा, बया - जाजोद (लक्ष्मणगढ़), जिला - सीकर (राजस्थान), पि.को.- ३३२ ३१८

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process private Ltd., 188, N.S.K. Salai, Madras - 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras - 600 026 (India), Controlling Editor: NAGI REDDI.